विश्व में हिंदी के प्रचार प्रसार एवं हिंदी प्रेमियों के लिए पूर्ण रुपेण समर्पित

विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान

से जुडे

१ हिंदी प्रेमियों को प्रतिवर्ष सम्मानित करना
२ हिंदी के प्रेमियों के लिए पत्रिका का प्रकाशन
३ उत्कृष्ट लेखन के लिए महाविद्यालय के माध्यम से कोर्स संचालित करना
४ हिंदी प्रेमियों की रचनाओं को प्रकाशित करना
५ साहित्यकारों के हित के लिए सरकार से मांग

सम्पर्क करें या लिखेः सचिव, विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान,एल.आई.जी–93, नीम सरॉय कॉलोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद–11कानाफुसीः 09335155949 ईमेलःsahityaseva@rediffmail.com

नवभारती पब्लिक स्कूल

१८६बी/१, नागबासुकी मार्ग, दारागंज, इलाहाबाद

कक्षाः नर्सरी से आठ तक

पढ़ाई के साथ-साथ कम्प्यूटर की शिक्षा, बच्चों को सभी प्रकार की सुविधा,लाइट न होने पर जनरेटर की व्यवस्था

प्रधानाचार्या
ऊषारानी श्रीवास्तव

नोटः अनुभवी अध्यापिकाओं की आवश्यकता है।

With Complement for Independence Day

Kishore Girls Inter College & Convent School

Reco. By. U.P.Government
Nursery to Class XIIth

- Education by experienced Teachers
- Good Atomosphere For Education
- Limited Students in every Class
- Free Addmision

Manager
V.N.Sahu

Cont.: 82/102, Meera Patti, T.P. Nagar, G.T. Road, Allahabad

Principal

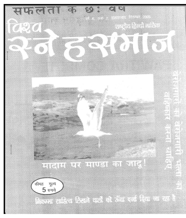

विश्व स्नेह समाज
लोकप्रिय हिन्दी सामाजिक मासिक पत्रिका
मई 07
प्रधान सम्पादक
गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी

डॉ० राज बुद्धिराजा 'भारत रत्न' क्यों नहीं?

मुझे खुशी हो रही है कि पत्रिका का 75वॉ अंक, सुप्रसिद्ध हिंदी प्रेमी, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की शिक्षिका, कहानीकार, कवियित्रि, संस्मरण लेखिका, जापान के सवोच्च सम्मान से सम्मानित, भारत जापान सांस्कृतिक मंच की अध्यक्षा डॉ. राज बुद्धिराजा को समर्पित है. डॉ. राज के व्यक्तित्व पर गौर करें तो वह महिलाओं के लिए एक मिसाल व अनुकरणीय व्यक्तित्व है. हिन्दी के विकास के लिए जितना आपने राष्ट्रीय ही नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर योगदान दिया है उतना कार्य मेरी जानकारी में किसी भी हिंदी लेखक व शिक्षक ने नहीं किया होगा. फिर भी हमारी सरकार पता नहीं क्यों उनके प्रति उदासीन है. जिस सख्सियत के कार्यो से जापान के 130 साल के इतिहास में जापान के सम्राट 18वीं सर्वोच्च सक्सियत मानते हुए जापान के सर्वोच्च नागरिक सम्मान से सम्मानित करते है, उसी शक्सियत को हमारी सरकार *भारत रत्न* तो दूर ज्ञानपीठ, पद्यमविभूषण, पद्यमभूषण सम्मान देने में शर्मा रही है. क्या हमारे देश की भिन्न क्षेत्रों की प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करने के लिए, उनका मनोबल बढ़ाने के लिए बने है या केवल राजनीतिज्ञों के चाटुकारों के लिए. पद्यम विभूषण, पद्यम भूषण, पद्यमश्री आदि राष्ट्र स्तरीय सम्मानों के लिए ऐसे नाम आते हैं जिनका नाम कभी सुनने, व पढ़ने को नहीं मिला. लेकिन जिस शक्सियत को देश के ही नहीं बल्कि जापान, मारीशस, जर्मनी सहित सैकड़ों देश के लोग उनकी हिंदी सेवा के लिए, हिंदी शिक्षक व लेखक के रुप में जानते हों उसे आज तक राष्ट्र स्तरीय सम्मान का न मिलना हमारी सरकार की कर्त्तव्यहीनता को उजागर करता है. हमारे देश में प्रतिभाओं का सम्मान न मिलना ही उन्हें विदेशों में जाने को मजबूर करता है.

मेरा तो यह विचार है कि सरकार अब भी चेते व ऐसी अन्तराष्ट्रीय स्तर की लेखिका/शिक्षिका, भारत–जापान सांस्कृतिक संबंधो की एक कड़ी, को कम से कम उनके 70वें जन्म दिवस परं भारत रत्न से सम्मानित कर अपनी भूल को सुधारें. जिससे डॉ0 राज के 70वें (जन्म दिवस) जीवन के सोपान को तो यादगार बनाने में कोई कोर कसर बाकी न रहें. पत्रिका परिवार व विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान परिवार इस अर्न्राष्ट्रीय सक्सियत के 70वें जन्म दिवस पर नमन्, वंदन, अभिनंदन करता है साथ ही परम पिता परमेश्वर, गॉड, अल्लाह, वाहे गुरु से यह प्रार्थना करता है आप जैसी शक्सियत को स्वस्थ, सुखी लम्बी आयु प्रदान करें

गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी

सम्पादकीय कार्यालयः
एल.आई.जी–93, नीम सरॉय कॉलोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद
कानाफुसीः 09335155949
ई–मेलःvsnehsamaj@rediffmail.com
gokul_sneh@yahoo.com

आवश्यक सूचनाः
1.पत्रिका में प्रकाशित किसी भी रचना के लिए लेखक स्वयं जिम्मेदार होगा। पत्रिका परिवार, प्रकाशक या संपादक का इससे कोई लेना देना नहीं होगा। विवाद के संदर्भ में न्यायालय क्षेत्र इलाहाबाद होगा।

स्वामी, प्रकाशक,संपादक, मुद्रक गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी द्वारा भार्गव प्रेस बाई का बाग से मुद्रित कराकर 277/486, जेल रोड चक रघुनाथ, नैनी, इलाहाबाद से प्रकाशित किया.

विशेषांक मूल्यः
25/–रु0मात्र

अंक–75वॉ, वर्ष 6, 2007
आर.एन.आई. न0ः
यू.पी हिंदी 8380/2001
पोस्ट पंजीकरण सं0ः
एडी.306/2006–08

अपने विचारों को पवित्र रक्खो

अपने विचारों को पवित्र रखो. धर्म का समस्त तत्व इसी एक वाक्य में छिपा हुआ है. अन्याय विधान तो धर्म की भूमिका और शब्दाडंबर मात्र है. क्रोध, कटु भाषण, ईर्ष्या और लोभ से बचना यही तो धर्म प्राप्ति का मार्ग हे. सदैव शुभकर्म करने में प्रवृत्त रहो. परोपकर के कार्यो में पूरी शक्ति और पूरा उत्साह लगाना यही तो कर्त्तव्य-पथ है. नेकी से बढ़कर न तो कोई धर्म है और न बदी से बढ़कर कोई पाप. यह मत पूछो कि धर्म से क्या लाभ है? जिज्ञासुओं! धर्म से उत्पन्न होने वाला सुख ही सच्चा सुख है. अन्य सुख तो विडंबना मात्र है. यदि तुम एक क्षण भी व्यर्थ खोए बिना जीवन भर नेक काम करते रहो तो निश्चय ही एक दिन जन्म मरण की फॉसी से छूट जाओगे. धर्म के पथ पर आरूढ़ होने में एक पल का भी विलंब मत लगाओ. आज से ही सेवामार्ग को अपना लो, ऐसा न हो कि कल करुंगा, सोचते-सोचते मृत्यु तुम्हारा गला दबा ले और जन्म-जन्मांतरो तक साथ रहने वाले धर्मरुपी अमर मित्र को प्राप्त करने से वंचित रह जाओ.

महान संत गुरु नानकदेव जी एक बार सद्‌विचारों का प्रचार करते हुए एक नगर में पहुंचे. वहां शाह शरफ नामक फकीर रहते थे. वह गुरुजी की ख्याति सुनकर उनका सत्संग करने पहुंचे. फकीर ने नानकदेव को गृहस्थ वाले कपड़े पहने देखा, तो उन्होंने सहज भाव से पूछा-'आप तो संत हैं, फिर भी आपने न सिर मुंडाया है, न फकीरों वालो कपड़े पहने हैं. ऐसा क्यों? नानकदेव जी ने जवाब दिया, 'मैं यह मानता हूॅ कि यदि करना ही है, तो मन को साफ करो, सिर को नहीं. कपड़े चाहे जैसे पहन लो, मन को फकीरी बनाओ. कपड़ो का नहीं, दुर्व्यसनों का त्याग करना वाला ही सच्चा फकीर हैं.'
शाह शरफ ने अगला प्रश्न किया, 'आप किस मत-संप्रदाय के संत हैं?' नानकदेव का उत्तर था, 'मेरा मत सत्य मार्ग है. सत्य ही मेरी जाति है, यही मेरा धर्म हैं.' शाह शरफ ने अंतिम प्रश्न किया, 'दरवेश कौन होता है?' गुरुनानकदेव ने कहा,'जो सत्य पर अविचल रहे, जो प्रेम व करुणा लुटाता रहे, वहीं सच्चा दरवेश है. जो न क्रोध करे, न अभिमान, न स्वयं दुखी हो, न किसी को दुख दे.

++++++++++++++++++++++++++++++++

गंवाकर भी सॅभले वाला मनुष्य, बुद्धिमान कहलाता है

एक राजा वन भ्रमण के लिए गया. रास्ता भूल जाने पर भूख-प्यास से पीड़ित वह एक वनवासी की झोपड़ी पर पहुॅचा. वहॉ उसे आतिथ्य मिला तो जान बची.
चलते समय राजा ने उस वनवासी से कहा-"हम इस राज्य के शासक हैं. तुम्हारी सज्जनता से प्रभावित होकर अमुक नगर का चंदन वन तुम्हें प्रदान करते हें. उसके द्वारा जीवन आनंदमय बीतेगा."
वनवासी उस परवाने को लेकर नगर अधिकारी के पास गया और बहुमूल्य चंदन का उपवन उसे प्राप्त हो गया. चंदन का क्या महत्व है और उससे किस प्रकार लाभ उठाया जा सकता है, उसकी जानकारी न होने से वनवासी चंदन के वृक्ष काटकर, उनका कोयला बनाकर शहर में बेचने लगा. इस प्रकार किसी तरह उसके गुजारे की व्यवस्था चलने लगी. धीरे-धीरे सभी वृक्ष समाप्त हो गए. एक अंतिम वृक्ष बचा. वर्षा होने से कोयला न बन सका, तो उसने लकड़ी बेचने का निश्चय किया. लकड़ी का गट्ठर लेकर जब वह बाजार में पहुॅचा, तो सुगंध से प्रभावित लोगों ने उसका भारी मूल्य चुकाया. आश्चर्यचकित वनवासी ने इसका कारण पूछा तो लोगों ने कहा-"यह चंदन काष्ठ है. बहुत मूल्यवान है. यदि तुम्हारे पास ऐसी ही और लकड़ी हो तो उसका प्रचूर मूल्य प्राप्त कर सकते हो." वनवासी अपनी नासमझी पर पश्चाताप करने लगा कि उसने इतना बड़ा, बहुमूल्य चंदन वन कौड़ी मोल कोयले बनाकर बेच दिया. पछताते हुए नासमझ को सात्वना देते हुए एक विचारशील व्यक्ति ने कहा-"मित्र! पछताओ मत, यह सारी दुनिया तुम्हारी ही तरह नासमझ है. जीवन का एक-एक क्षण बहुमूल्य है, पर लोग उसे वासना और तृष्णा के बदले कौड़ी मोल में गॅवाते है. तुम्हारे पास जो एक वृक्ष बचा है, उसी का सदुपयोग कर लो तो कम नहीं. बहुत गंवाकर भी अंत में यदि कोई मनुष्य सॅभल जाता है तो

आदाब अर्ज

फर्जी डिग्री बेचकर गुरु हुए धनवान।
शिष्य रो रहे सड़क पर प्रतिभा लहूलुहान।
दिल्ली से हॉककर चला निर्धन को अनुदान।
राहों में ही लुट गया [illegible]।
तन से लगते श्वेत है मन से पूरे श्याम।
पैसा फुट से नापते मन के हैं घनश्याम।
बनो विधायक सांसद सीधे जाओ स्वर्ग।
सात पीढ़िया सुख करें तनिक पड़े ना फर्क।

ईश्वर शरण शुक्ल, इलाहाबाद

vp singh 1 teen murti marg, new delhi tel. : 23792202 fax : 23018288 date 10.12.06 No. A/870

विश्वनाथ प्रताप सिंह
पूर्व प्रधानमंत्री
भारत सरकार

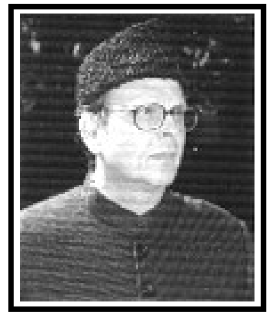

संदेश

पत्रांकः ए/८७० दिनांकः १०.१२.०६

प्रिय श्री जी.के.द्विवेदी जी,

आपका पत्र मिला. यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हुई कि आपका पत्रिका परिवार छः वर्षो के अल्पकाल में ही तीव्रगति के साथ विकास की ओर अग्रसर हुआ है व वरिष्ठ साहित्यकार डॉ० राज बुद्धिराजा पर एक विशेषांक निकालने जा रहा है. मुझे आशा और पूर्ण विश्वास है कि एक साहित्यकार पर निकाला हुआ यह विशेषांक समाज में ऐसे लेखन को प्रोत्साहन देगा जो आदर्शो एवं नैतिक मूल्यों को ऊँचा उठाने में समाज की सहायता करेगा.

उपर्युक्त पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए मेरी शुभकामनॉए आपके साथ है.
शुभकामनाओ सहित।

आपका

(वी.पी.सिंह)

श्री गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी
संपादक
विश्व स्नेह समाज
इलाहाबाद

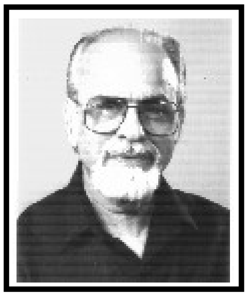

I K Gujral
Former Prime Minister
India

5, Janpath, New Delhi-
110011
Tel.: 2301-4300,2379-4433
Fax: 2379-4444
E-mail:gujralik@sansad.nic.in

संदेश

अक्टूबर २३, २००६

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि विश्व स्नेह समाज, वरिष्ठ साहित्यकार डॉ० राजबुद्धिराजा के ७०वें जन्म दिवस पर एक विशेषांक निकाल रहा है. डॉ. राज ने साहित्य के क्षेत्र में जो योगदान दिया है, वह सराहना के काबिल है. डॉ. राज एवं विश्व स्नेह समाज पत्रिका के लिए मेरी बहुत शुभकामनाएं!

इन्द्र कुमार गुजराल

श्री जी.के.द्विवेदी
संपादक
विश्व स्नेह समाज
इलाहाबाद

Ambassador of Japan
New Delhi

26th December, 2006

संदेश

Dr. Raj K. Buddhiraja,

On the occasion of your 70th birthdday, I wish to extend to you my most sincere congratulations.

You have contributed greatly for strengthening India-Japan relations, as well as for promoting mutual understanding between people of India and Japan through your expertise of language and literature in Hindi and Japanese. Your effort of translating Japanese literatures into Hindi has introduced Japanese literature to Indian people. Your Japanese students who has learned Hindi from you, including Japanese diplomats, actively enagaged as a bridge between India and Japan. In addition, your initiative of establishing the Indian Council for Japanese culture has been expanded opportunities for Indian people to interact with Japanese culture, Many awards you have been received, including the Order of the Sacred Gold Rays with Neck Ribbon from His Majesty the Empror of Japan, shows your dedication and endeavor in your filed and also in developing friendship between India and Japan.

I hope your countinued good health and further success in the future.

Yasukuni Enoki
Ambassador of Japan

To,
Mr. G.K.Dwivedy
Editor
Visv Sneh Samaj

EMBASSY OF JAPAN
INDIA

संदेश

New Delhi, January 10, 2007

Dr. Raj K. Buddhiraja is an indispensable assest for Japan-India relations. In our foreign ministry, we have some Hindi specialists who came to India to learn the language and remain keendy interested in every aspect of India during their whole career. These specialists have influential voices in the ministry based on their experience and knowledge. In fact, it was Dr. Buddhiraja who taught Hindi to these specialists in Tokyo when they joined the ministry. They owe a lot to her dedicated education. Her teaching is thus a backbone of our ministry's understanding and policy making vis a vis India.

I first met her when I was posted to India in September last year. I never imagined she was about to reach her 70s. She is always energetic and committed to further promting Japan-India relations. When we meet, I am often surprised at how much experience she has and more importantly how many new ideas she has in mind. The year 2007 is the Japan-India Frienship Year and we are making every effort to organize as many events as possible to introduce Japanese culture to India. She has already arranged an event in May celebrating Japanese children's day, which will form an indispensable part of our event calender.

I am sure that she will continue to kindly help us promote our bilateral relations and deepen mutual understanding. My best wishes to her prosperous 70s!

Shigeyuki Shimamori
Counsellor
Embassy of Japan in India

To,
Mr. G.K.Dwivedy
Editor
Visv Sneh Samaj

Raj Buddhiraja: A True Friend of Japan

Dr. Raj Buddhiraja needs no introduction as a well known and distingshed member of the contemporary Hindi literary circles. She has a vast experience of teaching Hindi to thousands of students both in India as well as abroad, and has written a number of noteworthy books, atricles, stories, and poems in Hindi. Dr. Buddhiraja has made a great contribution to the Hindi language, and created a niche for herself amongst some of the leading Hindi writers of today.

Dr. Buddhiraja has worked closely in co-operation with the Embassy of Japan for the last several years, and has offered her expertise during various cultural events as a volunteer. Through her activities, she has played a significant role in strengtheing India-Japan relations. She has written many books and articles on Japanese culture besides translations of Japanese stories and poems. In 1984 Dr. Buddhiraja initiated the establishment of the Indian Council for Japanese Culture. As its President, she has played as active role in organizing numerous cultural events including painting exhibitions, origami or paper folding classes, and music concerts with the aim of popularizing Japanese culture and language in India.

Amongst the several awards and honours she has received throughout her distingshed career, she has also been honoured with 'The Order of the Sacred Treasure-Gold Rays with Neck Ribbon', conferred upon her by His Majesty the Emperor of Japan in the year 2000.

I am proud to describe Dr. Buddhiraja as a true friend of Japan, and consider it a privilege to be associated with Dr. Buddhiraja. I offer me best wishes for her lasting good health and on going professional success, and sincerely hope that she continues to play an active role in developing the bridges of friendship between India and Japan in the long years to come.

H.E. Hiroshi Hirabayashi
Ex. The Ambassador of Japan in India

To,
Mr. G.K.Dwivedy
Editor
Visv Sneh Samaj

Dr. Raj Buddhiraja: A pleasing personality

Ryuchi Tanabe

Since 1998 I have witnessed a number of major changes in the world; the fall of Berlin Wall in 1989, the unification of Germany in 1990 (Bonn), the Gulf War in 1991 (Rindh), the former Yugoslavation conflicts in 1992 and 93 (Vienna), and the integration of Europe from 1994 till 97 (Munich).

Then my ministry asked me to go to India. With great pleasure I accepted this new mission, because I wanted to develop a strategic partnership between Japan and India.

It was in 1976 when I first made my visit to India. My first destination in India was Calcutta. I was thrilled to have been able to visit the Tagore House and the birthplace of Subhas Chandra Bose. Since my student time, I have always liked very much to read Taogore's poems.

Again in 1977 I had the opportunity to visit India accompanying Foreign Minister Hatoyama. The ex Prime Minister of India Mr. Vajpayee was then the Minister of External Affairs of India. I still remember very well how warmly our delegation was welcomed by Mr. Vajpayee. He made an important proposal for regular consultation at the Foreign Minister level between our two countries and his proposal was agreed upon instatly on the spot by Mr. Hatoyama.

As Deputy chief of Mission of Embassy of Japan, I was in Delhi together with my wife for two years from 1997 to 1999. We tried to visit as many different places as possible in order to capture the glimpse of this vast continent with such beauty and rich cultured heritage from Ladakh to Kyanaykumari (Leh, Agra, Calcutta, Jamshedpur, Indore, Mumbai, Aurangabad, Ajanta, Elora, Hyderabad, Visakhapatnam, Chennai, Mahabalipuram, Bangalore, Mysore, Thiruvanantpuram, Kochi, Kovalam, Kanyakumari).

We were very much impressed with the existence of cultural and historical diversity and unity of India. We were also touched deeply by the hospitality of people in India.

During our stay in Delhi, my wife and I met Dr. Raj Buddhiraja on various occasions we are very thankful to her to have been given such precious opportunities to learn about different faces of India. We remember her for her graceful smiles and gentle and heartfelt words. She had studied at my university in Tokyo and she often told us about her interesting trips she made to various places of Japan.

On one occasion there was an exhibition of traditional Japanese culture and her kind contribution to the exhibition brougt all of us the joy of viewing her most wonderful

collection of Sensu.

As far as I am aware of, she has been introducing Japanese culture for many years to the Indian people through her experience and active participation in various occasions to enhance Japan-India cultural ties.

I have the impression that Japan is being 'rediscovered' by India and India too is in the same process of 'rediscovering' Japan. It is indeed very encouraging to see how th number of young Indians learning Japanese language is growing every year and equally exciting to see how widespread the image of India as IT country is now being established in Japan.

In order to strengthen our traditionally very friendly relations, it is vital for both sides to deepen our mutual understanding through fundamental appreciation of each others' culture. In this context I would like to express my deep gratitute to Dr. Raj Buddhiraja for her deep understanding on Japanese culture and strong interest in Japan and her dedication to promote our mutual understanding as novelist.

In 1999 she wrote a book titled ' Uttrotar' and she described in this book our encounter. It is a great honour for me and no doubt this magzine 'Visv Sneh Samaj' has become a very special part of my valuable memory of my stay in India.

In today's world, it seems to me that so called 'scientific superstition' is prevailing. That is to say: if we could not prove the existence of one thins scientifically, then we come to counclusion without hesitation that this is not in existence. German philosopher Karl Jasper calls this way of thinking ' Wissenchaft saberglauben' (scientific superstition).

I always remember the words of the tittle prince written by Saint Exupery. "It is only with the heart that one can see the truth: what is essential is invisible to the eye."

I believe that Dr. Raj Buddhiraja will continue to enrich our heart and life with her wonderful novels.

On this occasion I and my wife NORIKO would like to wish her further success and prosperity both in her private and public life.

Ryuichi Tanabe
Director General for Internal Affairs
Headquarters of the Governer of Tokyo
Tokyo Metropolitan Government

पद्मम भूषण प्राप्त वरिष्ठ साहित्यकार, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्मानों से अलंकृत, अनेक कृतियों के रचनाकार माननीय विष्णु प्रभाकरजी की कलम से

प्रिय बंधु,

मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि आप सुप्रसिद्ध लेखिका डॉ० राज बुद्धिराजा के ७०वें जन्मदिवस के अवसर पर अपनी पत्रिका 'विश्व स्नेह समाज' का एक विशेषांक निकालते जा रहे हैं. निश्चय ही डॉ० राज बुद्धिराजा इस योग्य है कि उनके हिन्दी साहित्य के लिये किये गये योगदान का सम्मान और मूल्यांकन होना चाहिये. मैंने उनको दूसरे विश्व हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मारीशस में होने वाले अधिवेशन में काम करते देखा है. वह शांत भाव से रचनात्मक कार्य करने में विश्वास करती है और उस विश्वास को जीती भी है और जब वह एक प्राध्यापिका के रुप में काम करने के लिए जापान गई तो वहॉ उन्होंने केवल अपने को हिन्दी पढ़ाने तक ही सीमित नहीं रखा, बल्कि हिंदी पढ़ने वाले जापानी छात्रों को अनेक सांस्कृतिक कार्य करने की प्रेरणा दी. अपने निर्देशन में उन्होंने हिंदी नाटकों का रंगमंच पर प्रदर्शन जापानी विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत करवाया. नाट्य विद्या, साहित्य की सबसे अधिक सामाजिक विधा है. उस कला के द्वारा उन्होंने न केवल विद्यार्थियों को बल्कि दो देशों को, पास और पास लाने का प्रयत्न किया.

वह न केवल भारत-जापान सांस्कृतिक संघ की अध्यक्षा है, बल्कि दो देशों को एक करने के उनके कार्यो को देखते हुये जापान के सम्राट ने उन्हें 'सर्वोच्च नागरिक सम्मान' से अलंकृत किया. यह सम्मान उन्हीं को मिलता है जो मित्रता की सीमा जानते हैं.

ऐसे रचनात्मक कार्य करने वाली साहित्यकार और प्राध्यापिका डॉ० राज बुद्धिराजा का मैं उनके ७०वें जन्मदिन के अवसर पर हार्दिक अभिनन्दन करता हूॅं. मुझे आशा ही नहीं विश्वास है कि भविष्य में भी वह इसी तरह अनेक रचनात्मक कार्य करेंगी.

इस अवसर पर एक बार फिर मैं उनका अभिनन्दन और उनके शतायु होने की कामना करता हूॅं.

शेष शुभ! नववर्ष की हार्दिक शुभकामनाओं के साथ

आपका

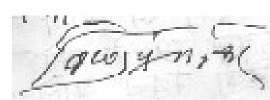

श्री गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी
संपादक 'विश्व स्नेह समाज'
एल.आई.जी-६३, नीम सरॉय कॉलोनी,
मुण्डेरा,इलाहाबाद, उ०प्र०

डॉ० रत्नाकर पाण्डेय
पूर्व संसद सदस्य (राज्यसभा)
सदस्यः अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी

फ्लैट नं. २-४, प्लाट न. ११३-११४
कृष्ण कुंज, लक्ष्मी नगर, दिल्ली-११००६२
फोन : ०११-२२०५१०१७, २२०५१०१८

संदेश

११.१२.२००६

मान्यवर श्री गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी जी,
सादर प्रणाम।

विश्व स्नेह समाज द्वारा डॉ० राज बुद्धिराजा के ७०वें जन्म दिवस पर आप विशेषांक प्रकाशित कर रहे हैं, यह प्रसन्नता की बात है. डॉ० राज बुद्धिराजा से मेरा कई दशाब्दियों से आत्मीय संबंध है और वह सुसंस्कृत स्वभाव की संस्कृत, हिन्दी और जापानी भाषा की ऐसी विदुषी है जो नई पीढ़ी के लिए प्रेरणा का प्रतीक हैं. उनकी कृतियॉं हिन्दी साहित्य के गरिमावर्धन में विभिन्न क्षेत्रों में अनुपम योगदान करने वाली है. वह समाज निर्माण के निर्मित सुन्दर आयोजनों का संगठन करने में भी सक्षम है और निरन्तर प्रति सप्ताह जागरण जैसे पत्र में उनके विचार पूरे समाज को प्रेरणा देने का काम करते हैं. वह १६ मार्च को ७० वर्ष की हो रही है और उनके ७०वें जन्म दिवस पर विश्व स्नेह समाज का विशेषांक प्रकाशित हो रहा है. उसमें उनकी साहित्यिक गरिमा के साथ-साथ जापानी और हिन्दी भाषा को एकीकृत करने में डॉ० बुद्धिराजा ने जो प्रयत्न किया है उनका भी विवरण देंगे ऐसा मेरा विश्वास है. विशेषांक और जन्म दिवस समारोह के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं.

आशा है, सानन्द हैं.

सादर,

आपका
(डॉ० रत्नाकर पाण्डेय)

श्री गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी
संपादक
विश्व स्नेह समाज
एल.आई.जी-६३, नीम सरॉय कॉलोनी,
मुण्डेरा,इलाहाबाद, उ०प्र०

23019080
23019606 एक्स. 458
23012592

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी

अशोक गहलोत
महासचिव

२४, अकबर रोड,
नई दिल्ली-११००११

संदेश

१६ दिसम्बर, २००६

प्रिय श्री द्विवेदी जी,

माननीय श्रीमती सोनिया गांधी, अध्यक्ष अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी को प्रेषित आपके दिनांक १५.११.२००६ का लिखा हुआ पत्र मुझे प्राप्त हुआ. धन्यवाद.

जिसके माध्यम से यह जानकर प्रसन्नता हुई कि वरिष्ठ साहित्यकार एवं जापान के सर्वोच्च सम्मान से अलंकृत डॉ० राज बुद्धिराजा का ७०वें जन्मदिवस पर विश्व स्नेह समाज हिन्दी मासिक द्वारा एक विशेषांक प्रकाशित किया जायेगा.

आशा है कि इस प्रकाशन के माध्यम से डॉ० बुद्धिराजा द्वारा देश व हिन्दी भाषा को की गई सेवाओं पर पूरा प्रकाश डाला जाएगा और पाठकों को उनके बारें में और अधिक जानने का अवसर मिलेगा. विशेषांक के प्रकाशन के लिए मंगलकामनाएं.

शुभकामनाओं सहित,

आपका

(अशोक गहलोत)

डॉ० गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी
एल.आई.जी-६३, नीम सरॉय
कॉलोनी, मुण्डेरा,इलाहाबाद

श्रीधर शास्त्री
प्रधानमंत्री

संदेश

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद

प्रिय श्री द्विवेदी जी,

आपने मुझसे राष्ट्रीय स्तर की साहित्यकार डॉ० राज बुद्धिराजा के बारे में कुछ लिखने के लिए निवेदन किया था. मुझमें इतनी हिम्मत कहा जो इतने बड़ें साहित्यकार के विषय में कुछ लिख सकूं. मैं तो केवल यह आशीर्वाद दे सकता हूँ, ईश्वर से कामना कर सकता हूँ. वो शतायु हों, देश के युवा पीढ़ी के साहित्यकारों के लिए प्रेरणा स्रोत बनें.

आपके इस विशेषांक के सफल प्रकाशन की कामना के साथ।

आपका

श्रीधर शास्त्री

डॉ० गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी
एल.आई.जी-६३, नीम सरॉय
कॉलोनी, मुण्डेरा,इलाहाबाद

श्याम विद्यार्थी
वरिष्ठ निदेशक

संदेश

दूरदर्शन केन्द्र, इलाहाबाद
लाजपत राय मार्ग, ममफोर्डगंज,
इलाहाबाद-२११००२

प्रिय श्री द्विवेदी जी,

अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है कि 'विश्व स्नेह समाज' हिन्दी मासिक पत्रिका अपने गरिमामय जीवन के ६ वर्ष पूरे कर अपना ७५वॉ अंक वरिष्ठ, ख्यातिलब्ध साहित्यकार डॉ. राज बुद्धिराजा विशेषांक के रुप में प्रकाशित कर रहा हैं. पत्रिका के अंक नियमित मिलते रहे हैं. विषय वस्तु के स्तर पर उसकी सोदेश्यता प्रभावशाली हैं. यह विशेष अंक वास्तव में पिछले अंकों से प्रभावशाली होगा ऐसी मेरी कामना हैं.

आज साहित्यकार सबसे अधिक उपेक्षित है. ऐसे आपके द्वारा अपने यादगार अंक को एक साहित्यकार को समर्पित कर रहे है. यह वास्तव में स्वागत योग्य कदम हैं. ऐसे प्रयास हमेशा होने चाहिए.

मुझे यह भी यह जानकारी मिली हैं डॉ० राज बुद्धिराजा १६ मार्च २००७ को ७०वर्ष की हो रही है. ईश्वर डॉ० राज को स्वस्थ दीघार्यु करें इसी कामना के साथ.

आपका

श्याम विद्यार्थी

डॉ० गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी
एल.आई.जी-६३, नीम सरॉय
कॉलोनी, मुण्डेरा,इलाहाबाद

हिंदी अकादमी, नई दिल्ली के पूर्व सचिव, समालोचक व साहित्यकार **डॉ० रामशरण गौड़** की नज़रों में डॉ० राजः

डॉ० बुद्धिराजा एक विनयशील एवं मितभाषी व्यक्तित्व

लाहौर (अब पाकिस्तान) में सन् १९३७ में जन्मी डॉ. (श्रीमती) राज बुद्धिराजा एक ऐसा विनयशील और मितभाषी व्यक्तित्व है जिनसे मिलने पर इनकी सरलता और सहजता स्वाभाविक रुप से ही आभासित हो जाती है. इन्होंने हिन्दी में एम.ए., पी.एच.डी करने के साथ-साथ पुष्प सज्जा इकेबाना में भी योग्यता प्राप्त की है. संस्कृत, हिन्दी, पंजाबी और गुजराती आदि भारतीय भाषाओं में निष्णात होने के साथ-साथ जर्मन, जापानी और अँगरेजी की विशेष ज्ञाता हैं. इन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यापन किया. इसके साथ ही तोक्यों, पेरिस, रोम तथा लंदन आदि विश्वविद्यालय के लगभग साठ हजार विदेशी विद्यार्थियों और राजनयिकों को हिन्दी पढ़ाकर हिन्दी की गरिमा और गौरव में अभिवृद्धि की है. ये उन विरले लोगों में से है जिन्होंने एक परंपरित लीक से हटकर हिन्दी भाषा और साहित्य का अध्यापन करते हुए तथा साहित्य और संस्कृति की सेवा करते हुए समाज में अपनी अलग पहचान बनाई हैं. इन्होंने समीक्षा, कविता, कहॉनी, लेख, उपन्यास, संस्मरण आदि हिन्दी साहित्य की सभी विधाओं के लगभग पैतालीस ग्रंथो की रचना की है. इनकी 'देव के काव्य में अभिव्यक्ति विधान' (समीक्षा), 'उद्धव शतक पुनर्मल्यांकन' (समीक्षा),'मधुमालती पुनर्मूल्यांकन' (समीक्षा), 'घनानंदः संवेदना और शिल्प' (समीक्षा), भारतीय महिलाओं की पारिवारिक और सामाजिक परिस्थितिगत समस्याओं को रेंखांकित करने वाले उपन्यास 'प्रश्नातीत', कावेरी, भारतीय जापानी महिलाओं पर आधृत उपन्यास 'रेत का टीला', पुत्री के विछुड़न के मार्मिक प्रसंग पर आधृत उपन्यास 'कन्यादान', नारी मन की संवेदना को अभिव्यक्ति प्रदान करने वाली कहॅानी-कृतियॉ पारो खुश है, हरा समंदर,कितना गहरा पानी, सप्तवर्णी में (कहानी संग्रह), उत्तोरोत्तर (आत्मकथा), बाल कहानियों के संग्रह 'चॉद वाला खरगोश', 'परों वाली राजकुमारी', 'दादी की कहानियॉ', 'मेरी श्रेष्ठ बाल कहानियॉ', जापान देश के समाज और संस्कृति का परिचय देने वाली कृतियॉ, जापान की श्रेष्ठ कहानियॉ, 'जापान मेरी निगाह में', 'साकुरा के देश में', 'साकुरा के ऑगन में', तथा वैचारिक संस्मरण 'हाशिए पर', 'कथनी करनी एक समान', 'कौन सहे पराई पीर', 'एक नाम और भी' आदि उल्लेखनीय रचना है. इनके लगभग चार हजार लेख, कविता, कहानियॉ आदि देश की प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं तथा आकाशवाणी और दूरदर्शन से प्रसारित हुए हैं.

> साहित्यकार का यह दायित्व है कि वह विश्व स्तर पर मानवीय रिक्तता के संकट को पहचाने और उसके गौर की व्यापक प्रतिष्ठा करें. डॉ० बुद्धिराजा के साहित्य का मूल्यांकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि इन्होंने मानवीय गौरव को प्रतिष्ठित करने पर अपनी कलम चलाई हैं और पैत्तालिस से अधिक कृतियों का सर्जन कर अब भी लगी हुई है.

ये अनेक राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कारों और सम्मानों से अलंकृत और सम्मानित हुई है जिनमें जापान सम्राट महामहिम अकिहितो द्वारा दिया गया सर्वोच्च नागरिक सम्मान (दि ऑर्डर ऑफ व सेक्रेड टूइयर गोल्ड रेज़ विद नैक रिबन), हिन्दी अकादमी दिल्ली द्वारा प्रदत्त साहित्यकार एवं कृति सम्मान, महिला शिरोमणि, रत्न शिरोमणि, भारतीय प्रतिष्ठा, राष्ट्रीय एकता मीडिया अवार्ड और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा प्रदत्त (पोस्ट डॉक्टरोल रिसर्च फैलोशिप), विद्यावाचस्पतिपश्च अनुसंधान अध्येतावृति आदि उल्लेखनीय हैं. इसके साथ ही इनको मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद, बेंगलोर द्वारा सतत हिन्दी भाषा और साहित्य की सेवा के लिए हिन्दी विशिष्ट सम्मान से सम्मानित किया गया हैं.

साहित्यकार का यह दायित्व है कि वह विश्व स्तर पर मानवीय रिक्तता के संकट को पहचाने और उसके गौरव की व्यापक प्रतिष्ठा करें. डॉ० बुद्धिराजा के साहित्य का मूल्यांकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि इन्होंने मानवीय गौरव को प्रतिष्ठित करने पर अपनी कलम चलाई है और पैतालिस से अधिक कृतियों का सर्जन करने के बाद आज भी निरंतर रचना कर्म में लगी हुई हैं. यद्यपि इनकी समस्त रचनाएँ इनकी सृजन-उत्कृष्टता का परिचायक है परंतु विशेष रुप से संवेदनात्मक धरातल पर रचित वैचारिक संस्मरण और दैनिक जागरण (हिन्दी) के प्रत्येक सोमवार को प्रकाशित होने वाला 'हाशिए पर' लोकप्रिय स्तंभ इनकी रचना-सृष्टि की उत्कृष्टता से साक्षात्कार कराता है. इनकी सृजन-दृष्टि में सत्यं, शिवं, सुदरम जैसे साहित्यिक मूल्य और उदात्त शक्ति, जीवन बोधमयी प्राणवान सांस्कृतिक चेतना परलक्षित होती है तथा बहुजन हिताय और

बहुजन सुखाय का संदेश निहित हैं. डॉ. बुद्धिराजा के समस्त विपुल साहित्य का अवगाहन करना तो संभव नहीं है, परंतु उनके जो भी ग्रंथ पढ़ने का अवसर मिला उन्हें देखकर यह कहा जा सकता है कि इन्होंने अपने लेखन के लिए आस-पास के परिवेश के कथानक-सूत्रों का अपनी गंभीर रचना-अन्तदृष्टि से ताना-बना बुना है और आज भारतीय समाज में हो रहे मूल्यों और सौहार्दपूर्ण वातावरण के विचलन को यथास्थान रेखांकित किया है. इनकी कोई भी कहॉनी या संस्मरण उठा लिया जाए सभी संवेदन मूल्य से अनस्यूत हैं तथा पाठक की संवेदना का विस्तार करते हैं. कहा जाता है कि एक महिला एक व्यक्ति नहीं एक संपूर्ण समाज होती हैं. उसके आचार-विचार का उसके घर-परिवार के साथ-साथ सभी रिश्तें-नातों, संबंधी और सह-एषणा को प्रभावित करता हैं. इन्होंने वर्तमान भारतीय समाज का महिला चरित्रों के माध्यम से उसका घिनौला चेहरा दिखाने का प्रयास किया है और भौतिकवाद के चमत्कार, पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से सभी मानवीय संवेदनाओं का तिरस्कार कर नाममात्र के लिए रह गये परिवारों की दुर्दशा की पीड़ा, वेदना और मानवी संबंधों में शेष रह गई औपचारिता को अभिव्यक्ति प्रदान की हैं. एक उद्धरण यहॉ प्रस्तुत है-"पिछले दिनों उच्चपदासीन प्रतिष्ठित महिला ने मेरी बाल सखी का इसलिए अपमान कर दिया कि वह पहली तारिख को इकतीस समझ उनके घर चली गई थी. मेरी लेखिका मित्र की ऑखों में मोती उतर आए जिन्हें संजीदगी से सहेज लिया था. प्रतिष्ठित महिला इसलिए आग्नेय हो गई कि बाल सखी बिना फोन किए उनके घर जा पहुँची थी और बाल सखी इसलिए उद्विग्न थी कि पिछले कई वर्षो के संबंधो को उन्होंने कच्चे धागे की तरह तोड़कर रख दिया था. बिना सोचे समझे कि बाल सखी उनके दुःख सुख में एक पैर पर खड़ी रहती थी. मैं मौन श्रोता की तरह कभी एक चेहरा देखती कभी दूसरा. इससे पहले कि मैं कुछ कहती गृहपत्नी ने शब्दों का एक और चाबुक उसकी पीठ पर जड़ दिया.

डॉ. बुद्धिराजा के जो भी ग्रंथ पढ़ने का अवसर मिला उन्हें देखकर यह कहा जा सकता है कि इन्होंने अपने लेखन के लिए आस-पास के परिवेश के कथानक-सूत्रों का अपनी गंभीर रचना-अन्तदृष्टि से ताना-बना बुना है और आज भारतीय समाज में हो रहे मूल्यों और सौहार्दपूर्ण वातावरण के विचलन को यथास्थान रेखांकित किया है.

आप जब आ ही गई हैं तो चाय तो पीती जाइए और मेरी बाल सखी बिना कुछ कहे उठकर चली गई. देखो? कैसे-कैसे लोग हैं. एक तो बिना फोन किए चले आते हैं दूसरा गलती भी नहीं मानते."(महज इत्ती सी बात के लिए-'एक नाम और भी' संग्रह से).

एक और उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत है-"जब मेरी बाल सखी को पुत्र-बधू ने उनसे यह पूछा कि आपका नाम क्या है? तो मैं सकते में आ गई. जिस घर में वे बरसों से रहती चली आ रही है, वहॉ के सदस्यों का नाम भूल जाना एक दंडनीय अपराध है. मैं समझ नहीं पायी कि वे कौन से नशे में डूब रही हैं. अभी तक तो मैंने दो ही तरह के नशे सुने थे 'कनक' और 'कनक' जिनके पाने और खाने से व्यक्ति अंधा हो जाता है. ये दोनों चीजें भी उनके पास नहीं हैं. ..मुझे बाद में पता चला कि मोटी रकम का लिफाफा हर पहली तारीख को लाने वाली बाल-सखी पानी की बूँद-बूँद के लिए तरसती हैं. जिस घर की एक-एक ईंट पर उसके पसीने की सौ-सौं बूंदें गिरीं, उसी घर को वह सूनी ऑखों से निहारती बेचैन हो रात-रात भर करवट बदलती और कभी-कभार गम गलत करने को मेरे पास चली आती हैं."(और वह एक सुंदर नाम भी-'एक नाम और भी'-से). जिस प्रकृति की छॉव में बैठकर भारत के ऋषि-मुनियों ने ज्ञान और अध्यात्म का चिंतन किया और विश्व को दिशा-दृष्टि दी उसका सजीव चित्रण डॉ. राज बुद्धिराजा की रचनाओं में मिलता है. यही कारण है कि इनकी 'साकुरा के देश में', 'साकुरा के ऑगन में', 'अभी अभी साकुरा खिला है' जैसी रचनॉए सामने आई हैं तथा इनकी अन्य रचनाओं में प्रकृति के प्रति सदाशयता का चित्रण हुआ हैं. 'यजुर्वेद' में पशु-पक्षियों की रक्षा करने वाले वृक्षों की वंदना की गई है जो प्रकृति के प्रति प्रेम को प्रदर्शित करती है-वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यः पशूनां पतये नमो नमः। (१६/१७)

प्रकृति के प्रति रागात्मक संबंध की अभिव्यक्ति आपने निम्न शब्दों में की है. वे लड़कों द्वारा वृक्षों से बेचने के लिए तोतों के पकड़े जाने पर व्यथित होकर कहती हैं-"शहजहॉ रोड पर टिके जामुन के ये वृद्ध वृक्ष क्यों इतने दुर्बल हो गये है कि आश्रय लेने आये प्राणियों की रक्षा नहीं कर पाते. वे सिर्फ मौन भाव से इन परिदों और क्रूर हाथों को देखते रहते हैं..... मैं कुछ नहीं कर सकती सिर्फ मंडन मिश्र के तोते का स्मरण कर सकती हूँ जो शास्त्रार्थ में बड़े-बड़ें पंडितो, महारथियों को हरा देता था. प्रार्थना कर सकती हूँ, इन परिंदो के हरे भरे संसार की

शेष पृष्ठ ..... २२ पर

काश्मीरी भाषा के मर्मज्ञ **प्रो० चमन लाल सप्रू,** सूक्ष्म दृष्टि से क्या देखते है डॉ० राज में-

डॉ० राज बुद्धिराजा का रचना संसार

डॉ० राज बुद्धिराजा एक व्यक्ति नहीं संस्था है. इनके बहुआयामी व्यक्तित्व एवं इनकी उपलब्धियों पर नजर डालने से पता चलता है कि राजजी एक अहिंसक मायने में जुझारु और जीवट वाली है. इनकी नवनोन्मेष शालिनी प्रतिभा किसी भी साहित्यकार के लिए प्रेरणादायी हो सकती है. जीवन के सात दशक पार करने की दहलीज पर भी इनकी ऊर्जा की दाद देने का लोंभ संवरण नहीं कर सकते हैं. अपनी मातृभाषा पंजाबी के अतिरिक्त हिन्दी और अंग्रेजी पर समान रुप से अधिकार है. दो अन्य भारतीय भाषाओं संस्कृत और गुजराती की भी ज्ञाता है. इसके बाद जापानी और जर्मन भाषाओं का एडवांस कोर्स करते-करते विश्व की इन दो महत्वपूर्ण भाषाओं के साहित्य और उन देशों की सांस्कृतिक धरोहरों का भी इनको विस्तृत ज्ञान है. पोलिश विद्वान भारत में पोलैंड के पूर्व राजदूत डॉ. मारिया खिस्तोफ ब्रिस्की के साथ अपने सम्पर्क में उनके संस्कृत एवं हिन्दी भाषा एवं साहित्य के ज्ञान के साथ-साथ भारतीय संस्कृति की उनकी जानकारी के बारे में जानने के बाद मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि हमारी इस विदुषी बहन को भी जापान में भारत का राजदूत होना चाहिए.

देश विदेश में प्राप्त अनेक प्रतिष्ठित सम्मानों और पुरस्कारों की श्रृंखला में अभी यथाशीघ्र इन्हें पद्यम अवार्ड, साहित्य अकादमी पुरस्कार, दिल्ली हिन्दी अकादमी का शलाका सम्मान, व्यास सम्मान और ज्ञान पीठ पुरस्कार ही तो बाकी है. इन सभी की वह निःसंदेह हकदार है. मुझे नहीं मालूम उक्त पुरस्कारों की प्राप्ति में विलम्ब क्यों हुआ है. इसके लिए राज जी का नहीं हमारा दोष है.

अब तक लगभग पचास ग्रंथो का प्रणयन करने वाली राज दीदी की साहित्य साधन आज तक निर्बाध गति से जारी है. दैनिक जागरण में हर सोमवार को इनका स्तम्भ 'हाशिए पर' पाठकों का लोकप्रिय स्तम्भ है. राज जी के रचना संसार की उत्कृष्टता का अंदाज इसी बात से लगाया जा सकता है कि उनके साहित्य पर महाराष्ट्र एवं हरियाणा के विश्वविद्यालयों से दो अनुसंधित्सुओं ने पी.एच.डी. की डिग्रियॉ प्राप्त की है.

राज दीदी की छः पुस्तकें मुझे पढ़ने को मिली. जिसमें 'कौन सहे तेरी पीर' शीर्षक से प्रकाशित पुस्तक में इनके संस्मरण दर्ज है. इसमें 'मेंहदी से महीन ये रिश्ते' अध्याय में लेखिका ने अपने और पाठक के बीच रिश्तों को भी उजागर किया है. 'क्या आपका और मेरा भी कोई रिश्ता है? मेरे पाठक मित्रों! शायद जरूर होगा? तभी तो सफेद कांगजो पर लिखने की कोशिश करती हूँ. सफेद कागज़ो पर उतरे काले नीले अक्षर से मोती ही हम दोनों के बीच रिश्ते हैं. क्या आप जानते हैं? नहीं जानते तो अब जाान लीजिए. हम दोनों के बीच का ये रिश्ता.

प्रस्तुत कृति पाठकों को सौपते हुए लेखिका मानती है कि 'सच तो यह है कि यह प्रभु की देन है जो मुझे समय-समय पर मिलती रही. तभी तो 'कौन सहे तेरी पीर' के अपने समर्पण में लेखिका लिखती है-'तुम्हारी देन, तुम्हे समर्पित मेरे प्रभु!' लेखिका जैसे रोज दैनन्दिन काम नियम से करती है. इसी प्रकार हर रोज कभी कविता, कभी कहॉनी, कभी संस्मरण लिखती है. इसके लिए निरंतर उसे प्रेरणा मिलती रहती है. कुछ न कुछ लिखने की. इसे ईश्वर की अनुकम्पा मानकर उनके द्वारा अपार सम्पदा ग्रहण करने के लिए श्रद्धान्वत होती है.

अपनी दादी के योगदान को कभी भूलती नहीं. प्रकृति, मनुष्य और अध्यात्म यह तीन तत्व है. यूँ तो राज दीदी की सभी रचनाऍ 'ज्यों नावक के तीर.... है. किन्तु उपर्युक्त 'पल' भी कोई अपवाद नहीं.

जब वह, तब और अब के जमाने की तुलना करती है, तो अनायास उनकी बालसखी कहती है तब का जमाना और था. लोग आपस में मिल जुलकर रहते थे और एक दूसरे के दुःख सुख में साथ खड़े रहते थे. अब जमाना बदल गया है. हिन्दुस्तान आजाद हो गया है. हर व्यक्ति इतना आजाद हो गया कि हवेली का हर आदमी एक दूसरे का गला काटने को तैयार रहता है. हवेली के सभी लोग अकेले-अकेले अपने कमरों में पड़े रहते हैं.

एक जगह लिखती है-"जब किसी संस्था की अध्यक्ष ने कुछ लेखिकाओं पर फब्ती कसते हुए कहा कि उनका साहित्य से क्या लेना देना. वे तो केवल गप्पबाजी और खाने पीने के लिए आती है तो मैं हैरत में पड़ गई. मेरी नजरों में हर लेखक शब्दों की दुनिया में रहता है.... हर आदमी प्यार का भूखा होता है तभी तो श्रीकृष्ण दुर्योधन के छत्तीस प्रकार के व्यंजन तजकर विदुर का साग खाने चले गए थे. कहॉ साग का स्वाद और कहॉ व्यंजनों का कुपच?" इदन्नम की भावना आज लुप्त हो गई है.

राजजी को तब और अब में आए परिवर्तन का अफसोस है. अपने अंतिम

संस्मरण में 'कहां गई हरियाली तीज' में मधुर स्मृतियों की याद सताए जा रही है. आज 'माता पिता को न बेटियॉ याद रहती है और न बेटियों को त्यौहार.. आज भी सावन का पूरा महीना इंतजार करते हुए कि मायके से रंग बिरंगी चूड़ियॉ, मेंहदी और फल मिष्ठान आयेंगे. पर ऐसा कुछ नहीं होता. मैं भी चातकी की तरह देखती रहती हूँ, हरियाली तीज सूखी की सूखी निकल जाती है. बिना नई साड़ी के और बिना सुंदर गीतों के. कहां चली गई वह हरियाली तीज? कहीं वह आपके घर तो नहीं हैं?

'पारो खुश है' में राज जी की अट्ठाईस कहानियॉ संगृहीत है. जो उनके कल, आज और कल को रेखांकित करती है. उनके कथा संसार में एक पारो केन्द्र बिन्दु है "जो न जाने कब से उनके मन के एक कोने में छिपी हुई है. वह अपने बचपन, यौवन, घर परिवार, पुत्र कलत्र से जूझती किसी मुकाम को छूती, अपने भीतर प्यार का लम्हा तलाशा करती थी." इनकी लघु कथाओं का केन्द्र बिन्दु नारी है. लेखिका ने 'उसके कोमल, सुंदर स्वप्निल स्नेहिल रूप को उतारने की कोशिश की है.

अपने पौत्र त्रयंबक के बहाने अपनी तीसरी पीढ़ी के बालको को ध्यान में रखते हुए लिखी हुई श्रेष्ठ बाल कहानियॉ तो कहती हैं. साथ ही दादी, नानी से सुनी हुई कहानियों की तर्ज पर परियों, राजा रानियों की भी कहानियां लिखती है. लेखिका को विश्वास है कि बच्चें इनकी ३५ श्रेष्ठ कहानियों को पढ़कर फिर से प्रकृति से रिश्ता कायम करेगें और खुश होगें.

हरा समन्दर लेखिका का चौथा कथा संग्रह है. इसमें वर्णित बीस कहॉनियों का केन्द्र बिन्दु भी नारी है. नारी मन को राज जी ने अपनी दृष्टि से देखने का प्रयास किया है. नीली कोठी, वसीयत, रिश्ते, पारो नहीं आएगी में कथा लेखिका में नारी के मन को संवेदना के ऐसे घेरे में दिखाया है जहॉ से वह बाहर नहीं निकल सकती है. 'बाबूजी' कहॅानी में सदियों से नारी पर हो रहे अत्याचारों की ओर स्पष्ट संकेत दिया है. लेखिका अपने इर्द गिर्द घूमने वाले पात्रों के प्रति सदशयता का भाव समेटे रहती है. इसीलिए इन कहानियों का अंत या तो सुखद है या कोमल.

मेरे पास डॉ.राज जी की एक और कहानी संग्रह जापान की श्रेष्ठ कहानियॉ है. यह उनके द्वारा जापान की श्रेष्ठ कहानियों का अनुवाद है.

तोक्यों विश्वविद्यालय में पढ़ाते समय जनमानस में उतरने का अवसर मिला व उनकी लगन और निष्ठा से अत्यधिक प्रभावित है. उनकी आत्मनिर्भरता की भी वह दाद देती है. लेखिका को जापानी जनता की अति आधुनिक और अति रूढ़ीवादी धरातलों पर एक साथ जीने की जीवन शैली देखकर खुशी है. गॉव छोड़ शहर की ओर भागने वाले लोगों के लिए हर समय लोक विश्वास संबंल बना रहना अच्छा लगता है. ये विश्वास काबुकि, नोह, नृत्य तथा साहित्य में दृष्टिगोचार दिखाई देती है. जापान की भौगोलिक, सांस्कृतिक और आर्थिक स्थितियों की जानकारी देने वाली उन कहानियों को लेखिका ने अपने प्रतिनिधि संकलन में संगृहीत किया है जिनमें युद्धोतर जापान निम्न मध्य वर्ग व निम्न वर्ग सांस लेता है. अनुवाद के कठिन कार्य के बावजूद लेखिका ने जापानी मित्र तथा अध्यापक से निरंतर विचार विमर्श कर किसी निष्कर्ष पर पहुॅचने में सफलता पाई हैं. निःसंदेह प्रस्तुत कथा संग्रह से हिन्दी पाठकों को जापानी कथा साहित्य के बारे में अच्छी जानकारी मिलेगी ऐसा हमारा विश्वास है और इस आदान प्रदान की प्रक्रिया को सम्पुष्ट करने का श्रेय राज जी को ही जाता है.

और अंत में डॉ. राज का काव्य संकलन "अभी अभी साकुरा खिला है" की चर्चा करके इस संक्षिप्त लेख को विराम देता हूॅ. हमारे कमल और गुलाब के ही समान शायद जापान का एक सुंदर फूल है-साकुरा. जापानी लोगों का यह सर्वाधिक लोकप्रिय फूल वसन्त ऋतु में लिखता है. इसकी आयु बस दो तीन सप्ताह तक है और फिर यह मुरझाकर झर जाता है. इसको देखने के लिए दूर दूर से आते है. जब कवयित्री राज जी कहती है कि इस सुंदर फूल के नीचे बैठ जापानी खाते पीते है-'गीत गाते है और खुश होते हैं. यह सब पढ़कर मुझे धरती के स्वर्ग कश्मीर के बादाम के फूल याद आते है. जाड़ों मे जमी हुई बर्फ जब बसन्त के आगमन के साथ-साथ पिघल जाती है तो नंग धड़ंग बादाम के वृक्षों की टहनियों पर पत्तों की कोपलें खिलने से पहले श्वेत पुष्प खिल जाते हैं.

जापान प्रवास के दौरान कवयित्रि को साकुरा पुष्प ने मानों मंत्र मुग्ध कर दिया- फलस्वरुप पाठकों को सामने अभी साकुरा खिला है शीर्षक के अन्तर्गत उनका लघु काव्य काव्य संग्रह आया है.

कवयित्रि इसके सौदर्य पर खुश तो हो जाती है किंतु साथ ही इसकी अल्पायु पर व्यथित हो जाती है. वह कहती है 'मैंने इसे कभी अपनी जिन्दगी के साथ सुर में सुर मिलाते देखा और कभी मित्रवत देखा.' सांराश यह कि इस साकुरा फूल के माध्यम से राजजी ने जपानी और भारतीय जनमानस को बहुत निकट लाने का प्रयास किया हैं.

+++++++++++++++++++

आकाशवाणी दिल्ली के समाचार निदेशक व डॉ० राज बुद्धिराजा के अनन्य मित्र **श्री सुभाष सेतिया** क्या लिखते हैं अपनी मित्र के बारे में-

दोस्तों की दोस्त : राज बुद्धिराजा

इस लेख में न तो मैं राज बुद्धिराजा के साहित्यकार के रुप में बताना चाहता हूँ और न ही यह कि उन्होंने हर तरह की विधा में ढेर साहित्य लिखकर हिन्दी साहित्य के इतिहास में कितना ज्यादा योगदान दिया है. मैं तो उनके सरल सहज मित्रता से इस कदर प्रभावित हुआ हूँ कि समझ में नहीं आता कि कहॉ से शुरु करूँ? यूँ तो मैंने उनका नाम विश्वविद्यालय में ही सुन रखा था और उनके मिलने की बेहद इच्छा भी थी लेकिन समय गुजरता गया और उनके दर्शन नहीं कर सका. मेरी उनसे पहली मुलाकात कब हुई यह मुझे ठीक-ठाक याद नहीं. इतना जरुर याद है कि जिन दिनों मैं 'आजकल' में था, उनकी किसी पुस्तक के पुनर्मुद्रण के सिलसिले में राजजी से मुलाकात हुई. पहली मुलाकात में ही मुझे लगा कि वे बोलती बहुत कम है; सुनती बहुत ज्यादा है. शायद इसलिए वह ज्यादा लिखती है. कुर्सी के रहते मेरी मुलाकात कई साहित्यकारों, लेखकों और पत्रकारों से हुआ करती थी, पता नहीं क्यों यह शक्सियत मुझे सबसे अलग लगी. 'आजकल' को छोड़ने के बाद सभी साहित्यकार मुझसे कटते चले गये लेकिन राजजी ने अपना रिश्ता पहले जैसा ही कायम रखा. उनके चेहरे की मन्द-मन्द मुसकान, उसमें छिपी सदाशयता मुझे बराबर अपनी ओर खींचती रही. इसमें सारा का सार श्रेय मुझे नहीं, बल्कि राज जी को जाता है. बिना किसी पीठासानों के वे अपने लिए अपना रास्ता खुद बनाती चली गयी.

उनके लेखन में कविता, कहानी, उपन्यास-संस्मरण, समीक्षा, स्तम्भ लेखन, संपादन सभी कुछ शामिल है. जापानी से हिन्दी में अनुवाद मौलिक लेखन से भी ज्यादा मन को छू लेता है. इन सबके बाद वे कई तरह के गोष्ठियों का आयोजन कभी घर में, और कभी बाहर किया करती और इसके बाद जलपान या भोजन की व्यवस्था अपने आप में ही एक अद्‌भुत मिसाल है. इतनी आत्मीयता से एक-एक अतिथि के लिए खाना परोसती और कभी-कभी मैं सोचने को मजबूर हो जाता कि आखिर यह महिला किस मिट्टी से बनी है कि थकान से चूर-चूर होकर भी इसकी शिकन चेहरे पर नहीं लाती.

उनके मित्रों की संख्या अनगिनत है. उनमें शोध-छात्र, प्रोफेसर, पत्रकार, लेखक, देश-विदेश की नामी हस्तियां, संगीतकार, सरकारी, गैर सरकारी आफिसर्स, राजदूत, राजनयिक और योग शिक्षक भी शामिल रहते. नये दोस्त बनाना और पुरानें दोस्तों को साथ लेकर चलना इनकी फितरत में शामिल हैं. जब साधारण आदमी केवल स्वार्थ वश संबंध बनाता बिगाड़ता है तो राज जी बिना किसी मतलब के दोस्ती निभाने में मशगूल रहती है. यही कारण है कि उनके निमन्त्रण को कोई 'न' नहीं कह सकता. इसका कारण पूछने पर पहले तो वे कुछ पल मौन हो जाती है, फिर नपे-तुले शब्दों में धीरे-धीरे कहने लगती है, 'सेतिया जी दोस्ती निभाने में उतनी ही मेहनत करनी पड़ती है, जितनी ज़िंदगी जीने में. धोखा खाने में उतना ही आनंद है, जितना धोखा देने में.

राज जी खाना-पकाने और दॉवत देने की शौकिन है. वे अक्सर अपने मित्रों को कारण-अकारण निमंत्रित करती है. इंडिया इंटरनेशनल सेंटर उनका प्रिय स्थान है. मुझे ही नहीं, सभी दोस्तों को यह लगता है कि उनके माध्यम से चार और दोस्त मिल गये. इतने सीमित-साधनों में सब कुछ करना निबाहना तो 'घर फूँक दोस्ती' निभाने जैसा हैं.

मैं अब भी यही कहता हूँ कि राजजी ने जितना लिखा है, उससे भी ज्यादा पढ़ा हैं. हर वर्ष उनकी दो-तीन पुस्तकें प्रकाशित होती है. सूचना कभी समाचार-पत्र-पत्रिकाओं से, कभी खुद, कभी उनके माध्यम से मिल जाती है. वे अपनी खुशी को दोस्तों में बॉटती है, बचा खुचा अपने पास रख लेती है. यही ख़ासियत उन्हें देश-विदेश के अलंकरणों तक ले जाती हैं.

मेरे और भी बहुत से दोस्त है लेकिन राज बुद्धिराजा तो दोस्तों की दोस्त हैं. मेरी खुशनसीबी है कि इतनी ईमानदार दोस्त मुझे मिली है. मुझे उन पर फ़क्र हैं. वे भी हमेशा खुश और सुखी रहे. इन्हीं शब्दों के साथ....

डॉ० राज बुद्धिराजा महिलाओं के लिए प्रेरणा स्रोत है, महिलाओं को उनके जीवन के बारे में अवश्य पढ़ना व जानना चाहिए.

दाऊजी, वरिष्ठ समाज सेवी

कादम्बिनी के पूर्व संपादक, साहित्यकार व डॉ० राज के मित्र **श्री राजेन्द्र अवस्थी** अपनी पैनी अर्न्तदृष्टि से क्या देखते है डॉ० राज में-

राज बुद्धिराजा-सामान्य से असमान्य की ओर

डॉ० बुद्धिराजा से मेरा परिचय बहुत पुराना है. सन् १९६४ में मैं एक पत्रिका के संपादक की हैसियत से हिन्दुस्तान टाइम्स आर्गनाइजेशन में आया था. वह पत्रिका थोड़ें समय में ही बेहद लोकप्रिय हो गई थी और इसके लिए अच्छे और कुशल लेखकों के सहयोग की अपेक्षा थी. मैं ठीक समय तो नहीं बता सकता लेकिन शायद सन् १९७० के आस-पास की बात होगी. डॉ. बुद्धिराजा उस समय कॉलेज में हिन्दी विभाग में कार्य कर रही थी. किसी भी संपादक को अच्छे लेखकों की जरुरत हमेंशा पड़ती है और इसी प्रसंग में राज बुद्धिराजा से संभवत् मेरा परिचय हुआ. वे तब शादीपुर डिपो के और 'रचना सिनेमा' के बीच में पटेल नगर में रहती थी. ठेट सड़क के किनारे इनका मकान था और उनके कॉलेज में एक दो बार भाषण देने जा भी चुका था. वहीं पर राज बुद्धिराजा से मेरा परिचय हुआ. पहले परिचय में ही मैंने उन्हें बुद्धिमान, सरल, सहज व्यक्ति के रुप में पाया था. इसलिए, पत्रिका के लिए लिखने का आग्रह मैंने उनसे किया था, वे तो सहज थी ही उन्होंने मेरा आग्रह नहीं टाला और अपना सहयोग देना शुरु कर दिया. ऐसी दो घटनाएं दो व्यक्तियों को मिलाने में बहुत गहरा काम करती हैं. मैं उनसे मिलने के लिए उनके घर भी जाने लगा था और वे भी उतने ही उत्साह के साथ मेरी किसी बात को टालती नहीं थी. राज बुद्धिराजा का नाम दिल्ली विश्वविद्यालय से संबद्ध कॉलेजों के बहुत समझदार और अच्छे लेखक के रुप में जुड़ा हुआ था. सहयोग का यही क्षण धीरे-धीरे बढ़ता गया और हम अच्छे मित्र बन गए. उनकी सहज मुस्कान, भोलापन और कुशल लेखन तीनों वे बिन्दु थे जिन्होंने मुझे आकर्षित किया था. यही क्रम आगे चलकर एक मजबूत दोस्ती में बदल गया और संपन्न लेखकीय सहयोगी के रूप में निकट आती गई. अब तक जब हम आयु के मजबूत छोर में बंध गये है तब पूरा व्यतीत हमें अपना गहरा आत्मीय लगन लग जाता है. बुद्धिराजा में लेखन की अच्छी क्षमता थी. इन्हीं सब कारणों से हम कई संस्थाओं के साथ बंधते गए और हमारी निकटता बढ़ती गई. अब तो राज बुद्धिराजा अपने-आप में कई क्षेत्रों में फैला हुआ एक सशक्त नाम है. बीच में वे एक-दो वर्ष जापान में रहीं और भारतीय साहित्य, संस्कृति और आध्यात्म का खासा प्रचार करती रही. जब जापान से लौटकर आई तो मैंने अनुभव किया कि जापानी संस्कृति में भी उन्होंने गहरी पैठ जमा ली थी. जापान से सर्वोच्च नागरिक सम्मान से सम्राट द्वारा अलंकृत बुद्धिराजा 'जापान सांस्कृतिक मंच' की अध्यक्ष भी बन गई थी. उनकी रचनाएं हिन्दी के पत्रों में बराबर और नियमित छपती रहीं. दिल्ली की साहित्यिक संस्थाओं में भी इनकी भागीदारी बढ़ती गई. तब मुझे लगा कि यही कर्मठशीलता है जो व्यक्ति को महान और लोकप्रिय बनाती है. एक ही मंच से कई बार हम लोगों को काम करने का अवसर मिला. एक अच्छे मित्र के रूप में उन्हें मैंने सफल व्यक्ति के रूप में देखा है और समय के साथ-साथ राज बुद्धिराजा का नाम बराबर मजबूत होता रहा है. उनकी 'थीसीज' ने लोकप्रियता प्राप्त की थी. दिल्ली के विश्वविद्यालय से संबंद्ध कालेजों में मैं उनकी उपस्थिति को देखता रहा हूँ. एक अच्छा मित्र बनने की उनमें पूरी योग्यता है. उसके बाद उन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र में भी अपने कदम बढ़ाये और 'जागरण' जैसे अखबार की स्तंभकार के रूप में इनकी ये दूसरी कड़ी सामने आई. इसके माध्यम से उन्होंने समाज और साहित्य को लेकर न जाने कितने प्रश्न उठाये और उनके समाधान भी प्रस्तुत किये. भारत के सामान्य जनजीवन और संस्कृति को उन्होंने बराबर परखा है. बड़ी-बड़ी सभाओं में अपने विचारों से उन्होंने अपनी पैठ जमाई है. यह सब काम बिल्कुल चुपचाप और मौन होकर उन्होंने करना शुरू किया और आज भी उतनी ही तटस्थता, विनम्रता और सहजता से कर रही हैं. यही कुछ क्षण होते है जो व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं. बुद्धिराजा का नाम इस क्षेत्र में मजबूती से जम गया और जब अब उनका मूल्यांकन करने का समय आया है तो यह समझ के परे है कि उन्हें किस रूप में कम और किस रूप में बड़ा कहा जाए. मैं तो कहूंगा कि वे समान रूप से बराबर चल रही है. उनकी यात्रा, यात्रा पुस्तकें, साहित्य कृतियों और समाज सेविकों के प्रति विनम्रता हिन्दी के विकास में बहूमूल्य ढग से सामने आई. फिर समय चलता गया और इनके परिवार से मेरा संबंध बन गया. उनका लड़का बहुत योग्य और कुशल यांत्रिकी है और इनकी लड़की सुनीता बुद्धिराजा अपने आप में बेहद लोकप्रिय और समझदार व्यक्तित्व से संपन है. मेरे पास सहायक-संपादक के रूप में कई वर्षो तक उन्होंने काम किया है. उसके बाद

एम.एम.टी.सी. में प्रशासन का अनुभव भी पाया. मैं आसानी से कह सकता हूँ कि राज बुद्धिराजा का पूरा परिवार अत्यंत सांस्कृतिक सूत्रों से संपंन है इसलिए, अब जबकि उन्होंने जीवन के ७० वर्ष पूरे कर लिए है, मैं उन्हें एक मजबूत शिखर के रुप में देखता हूँ. चाहता हूँ कि हमारे देश की महिलाएं ऐसे व्यक्ति से कुछ सीखें जो साधारण को असाधारण बना देता है.

डॉ० बुद्धिराजा एक विनय ... पृष्ठ १७ का शेष

जो पेड़ों पर बसा रहता है, वह हमेशा बसा रहे, रोजी-रोटी के लिए इन्हें कोई न उजाड़े. वहाँ से हमेशा 'बोल मिठ्ठू राम' सुनाई पड़ता रहे. मैं हर समय अपने घर में एक खूबसूरत तोते को देखती रहूँ, जो ऑगन से बैठक और बैठक से ऑगन तक की यात्रा करता रहे और उसकी यात्रा देख गद्गद् होती रहूँ. ऐसा होगा न मेरे प्रभु." (हरे भरे वृद्ध वृक्ष-'एक नाम और भी' से).

इनकी विराट सांस्कृतिक चेतना से तादात्म्य इनकी अधिकांश रचनाओं से होता है. भारत और जापान की संस्कृति के आदान-प्रदान के लिए ये भारतीय-जापान सांस्कृतिक परिषद् के अध्यक्ष के रुप में जो योगदान दे रही है, वह प्रशस्य और अभिनंदनीय है. मानवीय संवेदना की कुशल एवं सरस चितेरी विनयशील और मितभाषी, नपे-तुले शब्दों में ही सब कुछ कह देने वाली डॉ. राज बुद्धिराजा जी सौ वर्ष से अधिक जीवित रहकर अपने ज्ञान में अभिवृद्धि करते हुए अपनी रचनाओं के माध्यम से दूसरों को मार्ग दिखाती रहें. आंनदमय जीवन व्यतीत करते हुए समृद्ध और उदात्त गुणों से विभूषित रहें-

जीवेम शरदः शतम्, बुध्येम शरदः शतम्।
रोहेम शरदः शतम्, पुषेम शरदः शतम्।
भवेम् शरदः शतम्, भूषेम शरदः शतम्।
भूयसी शरदः शतात्।

विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान की अध्यक्षा एवं वरिष्ठ ग़ज़लकार विजय लक्ष्मी 'विभा' क्या कहती है संस्थान की सरंक्षिका डॉ० राज के बारे में-

१६ मार्च २००७ को श्रीमती राज बुद्धिराजा का अभिनंदन

रचती है प्रकृति युगों में ही, ऐसी विभूतियॉ धरती पर,
जिनके कृतित्व की कर पाता, खुद वक़्त न प्रतियॉ धरती पर,
हाँ, राज बुद्धिराजा जैसी, हों तो हों छवियाँ धरती पर,
पर क्या रच सकती हैं वे भी, उनकी सी कृतियाँ धरती पर।

भाषाएँ सारी दुनिया की जिसका अभिवादन करती है,
सान्निध्य मात्र पाने को ही छात्राएँ अध्ययन करती है,
सूरज की किरणें अंबर से जिसका नित बंदन करती हैं,
ऐसी विदुषियाँ धरातल की मिट्टी को कंचन करती हैं।

जीवनियाँ एवं शब्दकोष, यात्रावृतांत, संस्मरण दिये,
अनुवाद, समीक्षाएँ, नाटक, कविता के सारे चरण दिये,
सच उपन्यास देकर जिसने नूतन समाज के सपन दिये,
बच्चो के हेतु लिखा ऐसा, उनको सुन्दर आचरण दिये।

जिसका कृतित्व सागर सा है, एक बूँद भला क्या दिखलाये,
जिसका व्यक्ति अमरता है, छोटा सा तन क्या जतलाये,
जिसकी पहचान विद्वता है, उसका परिचय क्या रंग लाये,
ये राज़ बुद्धि के राजा का, है कौन यहॉ जो बतलाये।

वे तो साहित्य मनीषी हैं, उनकी साधना प्रणम्य करें,
हम भी साहित्य पारिखी हैं, दोनों के कृत्य अनन्य करें,
मूल्यांकन करने की भी हम, अपनी क्षमता को गण्य करें,
आओ विदुषी का अभिनंदन करके अपने को धन्य करें।

चलते-चलते

डॉ0 राज पर विशेषांक निकालना तो बहुत ही आवश्यक है. यह तो हिंदी साहित्य की स्तम्भ है.

गंगा प्रसाद विमल,
निदेशक, केन्द्रीय हिंदी निदेशालय

हंसराज कॉलेज, दिल्ली के हिन्दी विभाग के रीडर, शिक्षाविद् व डॉ० राज के सहयोगी **डॉ० महेन्द्र कुमार** ने बुद्धिराजा के शिल्प को उभारा है, देखिए क्या लिखते है वो–

शब्द शिल्पी डॉ० राज बुद्धिराजा

शब्द-शिल्पी, कला-मर्मज्ञ, संवेदनशील डॉ० राज बुद्धिराजा का अन्तर्मुखी शांत व्यक्तित्व बाहय जीवन के आघात-संघात, झंझावात को आत्मसात किए है. असीम को पा लेने की आशा में संकुचित सीमाओं को तोड़ देने की अभिलाषा, 'शिव की अराधना', 'सत्य की उपासना', 'सृष्टि के कण-कण में व्याप्त सौदर्य को समेट लेने की आकाक्षां'-लक्ष्य एक, माध्यम अनेक-गीत-संगीत, लघुकथा, यात्रा वृत्तांत, संस्मरण, रेखाचित्र, पत्रकारिता, शोध, संपादन, अध्यापन, लेखन-वैविध्यपूर्ण सृजन-संकल्प. इन सभी के मध्य रुप-संरचना भिन्न-भिन्न है, किन्तु मूल स्वर एक है जिसे मानवीय संवेदनाओं की महागाथा कहा जा सकता है.

मैंने उन्हें कभी मुक्त हास करते हुए नहीं देखा. शायद अपने अंतरंग मित्रों के मध्य कभी-कभी करती भी हो. किन्तु उनके मुख पर सदैव एक मृदुल मुस्कान झलकती रहती है. आत्म-चिंतन में लीन बुद्धिजीवी का आंतरिक उल्लास. डॉ० राजबुद्धिराजा के व्यक्तित्व में जन्मभूमि (पंजाब) की आर्द्रता अभी भी विद्यमान है. उसमें पॉच नदियों का पंचामृत, मक्की की रोटी, सरसो के साग की सोधी-सोंधी सुगंध व्याप्त है. पारिवारिक संस्कारों के कारण बाहय आडम्बरों, अंधविश्वासों के प्रति आर्यसमाजी तेवर भी दिखाई देते है. सामाजिक विद्रूपता के विरुद्ध बौद्धिक आक्रोश भी है.

उनका परिवार आर्यसमाज के सिद्धातों का पोषक रहा है. कलात्मक चेतना से सम्पन्न डॉ० बुद्धिराजा ने आर्यसमाज की मान्यताओं को प्रवचल-शैली के माध्यम से परिपुष्ट करने का प्रयास नहीं किया. उन्होंने ऋषि दयानंद की जीवनगाथा को चरितमूलक उपन्यास के रुप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया. संस्कृत के कथा-साहित्य की अनेक प्रवृत्तियॉ इस उपन्यास में लक्षित होती है. डॉ० बुद्धिराजा द्वारा रचित 'शंखनाद' की तुलना चरितमूलक 'रसकाव्य' से भी की जा सकती है. भारत विभाजन की त्रासदी को झेलते हुए आपका परिवार पंजाब (पाकिस्तान) से दिल्ली आकर स्थापित हुआ. किशोरावस्था के द्वार पर खड़ी 'राज' ने भी जीवन-संघर्ष का साक्षात्कार किया. जिंदगी और मौत के नंगे नाच को खुली ऑखों से देखा. उनकी संस्मरणात्मक रचनाओं में जन्मभूमि के प्रति लगाव, मोह, बिछुड़न की पीड़ा नाना रुपों में झलकती है. डॉ० राजबुद्धिराजा ने एशिया एवं यूरोप के अनेक देशों की यात्राएं की है. 'यात्रा-वृत्तांत' (साकुरा के देश में) भी लिखे हैं. किन्तु जब उन्हें पाकिस्तान की यात्रा का सांस्कृतिक आमंत्रण मिला, तो उन्हें लगा कि जैसे उनके अपने 'मैके' से बुलावा आया है. सहर्ष लाहौर पहुॅची. वहॉ के लोगों से आत्मीयतापूर्वक मिली. महसूस हुआ कि जैसे उनका नटखट बचपन फिर से लौट आया है. पुनः मिलने का वायदा कर वे एक स्वस्थ मानसिकता के साथ भारत लौटी. डॉ० राजबुद्धिराजा ने अपने शोध-प्रबंध में रीतिकालीन सौदर्यशास्त्र का विवेचन प्रस्तुत किया है. सम्भवतः इसीलिए रीतिकालीन सौंदर्य-चेतना के विविध संदर्भ उनके कृतित्व का अंग बन गए है. जापान में रहते हुए उन्होंने साकुरा[1] के सौदर्य को निकटता से देखा, सराहा और अपनी कविताओं में उसका वर्णन किया. जापानी भाषा का अध्ययन करते हुए 'हाइकू'[2] का रसास्वादन किया. 'हाइकू' के समानांतर हिन्दी में प्रेम-श्रृंगार एवं प्राकृतिक सौंदर्य के काव्यात्मक लघुचित्र प्रस्तुत किए. आजकल वे 'रॉका'[3] छंद-विधान के अन्तर्गत रोमांस काव्य का सृजन कर रही हैं.

डॉ० बुद्धिराजा का कथा-साहित्य आत्मजीवी रुग्ण मानसिकता एवं 'अबसेंशन' से मुक्त है. उनके पात्र महानगरीय निराशा, दुःख, दैन्य, विषाद, अवसाद को झेलते हैं; टूटते है. टूट-टूट कर बिखरते है और फिर जुड़ जाते हैं. जैनेन्द्र के पात्रों की सी काम कुंठा उनमें नहीं है. वे इस अर्थ में व्यक्तिवादी नहीं जनवादी हैं.

पत्रकार का रुप भी उतना ही प्रखर है जितना कि एक कथाकार का. उनकी पत्रकारिता में 'स्टिन्ग ऑपरेशन' का दंश नहीं है. उनकी पत्रकारिता 'येलो', 'ब्लू', या 'रेड' किसी भी रंग में रंगी हुई नहीं हैं. उसका अपना एक उज्जवल वर्ण हैं. 'हाशिए पर' (दैनिक जागरण), 'दुनिया मेरे आगे' (जनसत्ता) आदि कॉलम वे नियमित रुप से लिखती है. अन्य पत्र-पत्रिकाओं भी उनके लेखों की चिर प्रतीक्षा में आतुर रहती हैं. अपने चारों और फैली हुई दीन-दुनिया को वे पैनी दृष्टि से देखती है, महसूस करती है, आत्मसात करती है और फिर एक संस्मरणात्मक रेखाचित्र के रुप में उसे प्रस्तुत कर देती है. उनके रेखाचित्रों के वात्सल्यमयी नानी, खिलते

गुलाब जैसे रुप-रंग वाली चाची जैसे आत्मीय जन भी है और सर्वहारा वर्ग के प्रसन्न-उदास प्राणी भी 'दिल्ली अतीत के झरोखे से' कॉलम में उन्होंने दिल्ली के बदलते हुए रुप को देखा है. अंधेरी बंद गलियों का संगास, इंडियागेट का उनमुक्त उल्लास उनके संस्मरणात्मक साहित्य में सिमटा हुआ है. लेखिका को मलाल है तो केवल इस बात का कि दिल्ली-जिसमें अपनापन था, एक तहजीब थी, एक नज़ाकत और नफ़ासत थी, वह दिल्ली न जाने आज कहाँ खो गई हैं. आज चारों ओर है ऊँची-ऊँची बेजान इमारतें, जिनमें न तो मुगलकालीन शालीनता है और न ही ब्रिटिशकालीन 'एंटिकेट' चारों ओर फैलती जा रही है ई-मेल, इंटरनेट, ई-बैकिंग, चैटिंग की मशीनी दुनिया. इनके बीच दिल्ली भी धन-दौलत उपार्जित करने वाली एक मशीन बनकर रह गई है. आत्मीय रिश्तों से कोई सरोकार नहीं है जिसका.

हिन्दी से जापानी तथा जापानी से हिन्दी में अनुवाद-कार्य भी किया है. आपकी अनूदित रचनाएं मशीनी अनुवाद नहीं है. आजकल कम्प्यूटर के द्वारा किए जाने वाले अनुवाद की सीमाएं अनंत है. किन्तु कम्प्यूटर कृत अनुवाद शब्दों एवं वाक्यों का अक्षरशः अनुवाद होता है. उसमें हृदय का स्पंदन नहीं होता. वह सर्वथा भावशून्य होता है. डॉ० बुद्धिराजा बहुभाषाविद् है. टोकियों में अध्यापन कार्य करते हुए अपने जापानी भाषा का प्रत्यक्ष ज्ञान अर्जित किया. अपने जापानी छात्रों के मध्य संवाद स्थापित करते हुए भाषा-ज्ञान को परिमार्जित किया. सहृदय प्रभाता के रुप में जापानी लघुकथाओं एवं हाइकू कविताओं का रसास्वादन किया और फिर उन कविताओं एवं कथा-साहित्य का संवेदन-संवलित अनुवाद प्रस्तुत किया. इसीलिए उनके अनुवाद में एक सृजनशील साहित्यकार की कोमलता, मधुरता, स्निधता विद्यमान है. अनुवाद होते हुए भी वह अनुवाद प्रतीत नहीं होता. वह नवनवोन्मेष शालिनी प्रतिभा का काव्य-विस्तार प्रतीत होता है. डॉ० राज बुद्धिराजा ने भारत एवं जापान के मध्य सांस्कृतिक सेतु का कार्य किया है. इसीलिए उन्हें जापान के सर्वोच्च साहित्यिक सम्मान से विभूषित किया गया है. हिन्दी अकादमी, दिल्ली ने भी उन्हें सम्मानित किया है. डॉ० राजबुद्धिराजा का वैविध्यपूर्ण रचनात्मक लेखन नारीवाद तक सीमित नहीं है. इसीलिए तो उत्तर आधुनिकता के समर्थ आलोचक स्त्री-विमर्श की चर्चा करते हुए डॉ० बुद्धिराजा के लेखन की ओर कृपादृष्टि (!) से देख नहीं पाते. डॉ० बुद्धिराजा के समग्र लेखन पर शोध कार्य हुआ है, हो रहा है. शोधपरक लेख भी लिखे गए हैं. किन्तु सर्वागीण शोध-कार्य के लिए एक नई दिशा-दृष्टि एवं मार्ग-निर्देशन की आवश्यकता अभी भी है. आशा है पीठासीन समीक्षकों की दूर-दृष्टि निकट भविष्य में डॉ० राजबुद्धिराजा के रचना-कर्म का ऐतिहासिक मूल्यांकन प्रस्तुत करेगी.

....

१. जापानी जलवायु में खिलने वाला एक विशिष्ट फूल जो मानव-हृदय की मधुर-कोमल भावनाओं का प्रतीक माना जाता है.

२. लघु-लघु काव्य-बिम्बों के माध्यम से प्राकृतिक सौंदर्य की अभिव्यंजना

३. वर्णो की विशिष्ट योजना पर आधृत जापानी छंद. +++

अगर किसी को कुछ देना चाहते हो तो उसके ओठों पर मुस्कराहट दे दों. दाऊजी

विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान, संयुक्त सचिव, रेमण्ड पत्रिका के संपादक व कवि **ईश्वर शरण शुक्ल** के क्या है विचार

डॉ० बुद्धिराजा

डॉ० बुद्धिराजा को सत् सत् नमन!,
श्रेष्ठ साहित्य की लेखिका को नमन।
विश्व हिन्दी जगत की धरोहर विपुल,
सात भाषा की ज्ञाता को सत् सत् नमन।।

सन् सैतीस में जन्मी थी लहौर में,
मार्च सोलह की तारीख पल भोर में।
शिक्षा दीक्षा हुई प्रांत पंजाब में,
रहती दिल्ली बंधी हिंद की डोर में।।

चल रही है निरंतर कलम वेग से
बह रही है महक हिन्दी की तेज से।
कर रही नित सृजन उच्च्य साहित्य की,
विश्व के कोने कोने से सम्वेद से।।

इंडो जापान परिषद की अध्यक्ष है,
अति अनोखी प्रबल बात यह सत्य है।
इतना सम्मान दुनिया से है मिल चुका,
गिनना मुश्किल बहुत यह कटुसत्य है।।

बाल साहित्य से उच्च्य साहित्य तक,
लेखनी चल रही है निरंतर अभी।
दिल्ली, लंदन हो, पेरिस चीन या जर्मनी,
राह सबको दिखाती पढ़ाती अभी।।

पुस्तकों का पूरा हुआ, अर्द्धशतक,
रन बनाती गयी पिच निहारा नहीं।
कैच कोई नहीं कर सका आज तक,
विघ्न बाधा से हृदय हारा नहीं।।

विश्व स्नेह कृतज्ञ है आपका,
ज्ञान की देवी कहना गलत नहीं।
मातृभाषा की संरक्षिका आप है,
दीर्घायु हो जीवन कामना है यही।।

धन्य धरती हुई आज प्रयाग की,
मंच पर देखकर मन प्रफुल्लित हुआ।
कोटि सा है नमन हो सतायु सुखद,
विश्व हिन्दी जगत पल्लवित खुब हुआ।।

डॉ० राज के मानस जापानी पौत्र, अध्येता हिंदी व उनको गुरु के रुप में स्वीकारने वाले **योशिओ तकाकुरा** (एम. फिल-हिन्दी, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय) क्या सोचते है उनके बारे में-

दादीजी, गुरुजी और शिकंजी, राजा बुद्धिराजा जी

मुझे ठीक से याद नहीं है कि मेरे जीवन में कब से राजकुमारी बुद्धिराजा जी इतना महत्वपूर्ण अस्तित्व बन गई. उनके पहली मुलाकात शायद कुछ साल पहले जापानी दूतावास में आयोजित एक पार्टी में हुई थी, पर संभव है कि उसके पहले भी हम मिल चुके हों. कम से कम यह तो याद है कि २००१ में जब मैं दिल्ली में हिन्दी पढ़ने आया था, उसी साल मैंने उनका नाम अपने एक मित्र से सुना था. उसने मुझे बुद्धिराजा जी एक कविता दिखाई, जो कृष्ण जी पर लिखी थी. मुझे बहुत सुंदर लगी.

न जाने मुझमें क्या देख लिया, बुद्धिराजा जी मुझ पर एहसान करती आई. मुझे घर में बुलाया करती, मुझे पंजाबी भोजन खिलाया करतीं, और कभी-कभी मुझे उनकी सेवा करने का अवसर देंती. मुझे अब अनुभव होता है कि मेरी क्या खुशनसीबी है कि मुझे परदेश में भी दादी जी मिल गई. मैं बचपन में माता-पिता जी से अधिक दादीजी को गोद में पाला-पोसा था क्योंकि मेरे माता-पिता दोनों काम करते थे और दादाजी भी. मुझसे भूल हुई तो माता-पिता जी मुझे ज़रूर डॉटते थे, और उसका असर नहीं पड़ता तो दादाजी को कष्ट उठाना पड़ता था, पर दादीजी के साथ कभी ऐसा नहीं हुआ. वे मुझे डॉट की जगह मिठाइयॉ और खिलौनें देती थी. ऐसे लड़के का 'दादी जी का बच्चा' होना स्वाभाविक है. उस 'दादी जी का बच्चे' को भारत में भी दादीजी मिल ही गई.

लेकिन, एक मायने में, बुद्धिराजा जी से मिलना-जुलना मेरे लिए लाज़िमी था. वे जापान से इतना घनिष्ठ संबंध रखती है कि दिल्ली में उनके बिना भारत-जापान सांस्कृतिक आदान-प्रदान से संबंधित कोई समारोह पूरा नहीं होता. बुद्धिराजा जी और जापान का

न जाने मुझमें क्या देख लिया, बुद्धिराजा जी मुझ पर एहसान करती आई. मुझे घर में बुलाया करती, मुझे पंजाबी भोजन खिलाया करतीं, और कभी-कभी मुझे उनकी सेवा करने का अवसर देंती. मुझे अब अनुभव होता है कि मेरी क्या खुशनसीबी है कि मुझे परदेश में भी दादी जी मिल गई.

संबंध अब लगभग चौथाई शताब्दी का हुआ. उन्होंने १९८१ से १९८३ तक टोक्यों के एक विख्यात विश्वविद्यालय, जहॉ खासकर विदेशी भाषाओं का अध्ययन-अध्यापन होता है, में कुछ वर्ष हिन्दी सिखाई. उस विश्वविद्यालय में अन्य अनेक भारतीय अध्यापक कुछ वर्ष के लिए हिन्दी सिखाने आते है, लेकिन उनके और बुद्धिराजा जी के बीच एक बड़ा फ़र्क था कि उन्होंने भारत लौटने के बाद भी जापान से संबंध न तोड़ा, और इन दो देशों की दोस्ती मज़बूत करने का कार्य और सक्रिय रुप से करने लगीं. उन्होंने १९८४ में इडियन कौसिल फॉर जापानी संस्कृति स्थापित की, जिसके जरिए भारत और जापान के सांस्कृतिक आदान-प्रदान से संबंधित तरह-तरह के समारोह, संगोष्ठियॉ तथा सम्मेलन आयोजित करती आई. और उनकी कुछ पुस्तकें जापान से संबंधित हैं. मसलन, 'जापानी सीखें' हिन्दी में लिखी जापानी भाषा की पाठ्य-पुस्तक है, जो जापानी सीखने वाले हिन्दी भाषा-भाषियों के लिए उपयोगी है. 'अभी-अभी साकूरा खिला है' काव्य संग्रह है, जिसमें जापान के सौदर्य के प्रतीक 'साकुरा' वृक्ष पर सुंदर-सुंदर कविताऍ संकलित हैं. २००० में उन्हें जापानी सम्राट द्वारा जापान के सर्वोच्च नागरिक पदक से सम्मानित किया गया है, यह उनकी कार्यसिद्धि का एक प्रतीक कहा जा सकता है. यह पदक इतना गौरवमय है कि १३२ वर्ष में केवल १८ व्यक्तियों को ही मिला है. बुद्धिराजा जी ने भारत और जापान की मित्रता की स्थापना और बढ़ोत्तरी में कितना महत्वपूर्ण योगदान दिया, अब और कहने की जरुरत न होगी. इसलिए दिल्ली में रहते हुए उनसे न मिलना एक जापानी होने के नाते नामुमकिन था. और यह जानकर मुझे और भी खुशी हुई कि मेरे कुछ जापानी अध्यापक, जिन्होंने जापान में मुझे हिन्दी सिखाई, बुद्धिराजा जी के मित्र या छात्र थे. गुरु जी के मित्र तो सब गुरुजी ही होते हैं, और जब गुरुजी के गुरुजी निकले तो क्या कहना. उस समय से उनके प्रति मेरी श्रद्धा और भी बढ़ गई.

लेकिन उनका मुझ पर सबसे बड़ा एहसान यह है कि मुझे हिन्दी में कविता लिखने के लिए उत्साहित किया. मैं केवल हिन्दी भाषा और साहित्य का

एक विदेशी विद्यार्थी था, और हिन्दी फ़िल्म का प्रेमी. सपने में भी नहीं सोचा था कि मैं भी हिन्दी में रचना करुँ. दरअसल मुझे अपनी मातृभाषा में भी कविता लिखने की आदत न थी. जब बुद्धिराजा जी २००५ में पूर्वातिपूर्व नामक भारत-जापान काव्य समारोह आयोजित कर रही थी, तब उन्होंने मुझे याद किया और हिन्दी में कविता लिखने के लिए आग्रह किया. मैंने इसलिए हॉ कह दिया कि मैं उनके सामने न नहीं कह पाता था. कलम तोड़-मोड़ कर एक कविता लिखी और उस समारोह में पढ़ी. कविता ख़ास नहीं थी, पर मुझे जरूर उत्साह और साहस मिला. उसके बाद भी कभी-कभी हिन्दी में कविता लिखना शुरू किया. यहाँ तक कि जापानी में भी कविता लिखने की कोशिश होने लगी. एक विदेशी को भी साहित्यिक संसार में प्रवेश कराती है, तो ज़ाहिर है उन्हेंाने आज तक अनेक देशी युवकों की दीक्षा की हो. और अब वे मुझे एक लेख हिन्दी में लेखने का अवसर दे रही है, जो आपके सामने हाजिर हैं. एम.ए. और एम.फिल. में कोर्स-वर्क करते समय हिन्दी में पेपर तो बहुत लिखे थे, लेकिन इस तरह का लेख लिखना तो मेरे लिए पहला अनुभव है. वे फिर से मुझे नई दुनिया दिखा रही हैं.

मैंने इस लेख का शीर्षक 'दादीजी, गुरुजी और शिकंजी, राजा बुद्धिराजा जी' रखा. शायद पाठकों को दिलचस्प लगेगा कि क्यों 'शिकंजी? यह तो जाहिर है कि मैंने तुक मिलाने के चक्कर में शिकंजी' शब्द जोड़ दिया. लेकिन एक और कारण हैं. गर्मियों के एक दिन मैं उनके घर गया था, तो उन्होंने मुझसे पूछा, "शिकंजी लेगें?" दरअसल तब तक मुझे पता नहीं था कि 'शिकंजी' का अर्थ क्या हैं. पर इतना तो समझा कि 'जी' लगा हुआ हैं, अवश्य मंगलमय वस्तु होगी. मैंने जवाब दिया, "जी हॉ!" आया नींबू पानी, जो मैं गर्मियों के दिनों रोज़ सुबह पीता हूँ. उन्होंने मुस्कराकर बताया कि "हम इसे 'शिकंजी' कहते हैं." इस भांति 'शिकंजी' बुद्धिराजा जी के घर में ही मेरे कोश में आया शब्द था. स्वाद भी अच्छा था. और, शिकंजी न सही, जब भी मैं उनके घर जाता हूँ, वे मुझे 'लिमका' पिलाया करती हैं. अब आप अनुमान लगा सकेंगे कि मेरे जह़न में बुद्धिराजा जी और शिकंजी का संबंध कितना गहरा हैं.

अब मुझे लग रहा है कि मुझे इसलिए यह याद नहीं है कि उनसे पहली बार कब मिला, क्योंकि उनसे मेरा संबंध पिछले जन्म से चलता आ रहा है. मैं उम्मीद करता हूँ कि आप मुझे इसी तरह आर्शीवाद देते रहें और मैं आपका आभारी रहूँ. और.... कृपया मुझे शिकंजी पिलाया करें.

कल, आज और कल भी बहुपयोगी

'विश्व स्नेह समाज' के पाठकों को विशेष तोहफा. घर बैठे प्राप्त करें वर्ष भर में १२ अंक अपनी प्रिय मासिक पत्रिका

विशेष सदस्यता योजना में भाग लीजिए, अपने नाम, पता के साथ निम्न पते पर भेजें- **संपादक, 'विश्व स्नेह समाज', एल.आई.जी-१३, नीम सरॉय कॉलोनी,** मुण्डेरा, इलाहाबाद-२११०११

लोकप्रिय हिन्दी सामाजिक मासिक पत्रिका

विश्व स्नेह समाज

एक प्रति:रु०५/- **विशिष्ट सदस्य** : रु० १००/- **द्विवार्षिक सदस्यता** : रु०११०/- **पंचवर्षिय सदस्यता**:रु०२६०/- **आजीवन सदस्य**:रु०११०१/- **संरक्षक सदस्य** :रु० २५००/-

☞विशिष्ट सदस्यों का संचित्र संक्षिप्त परिचय एक बार प्रकाशित किया जाएगा.

☞आजीवन सदस्यों का पूर्ण जीवन परिचय सचित्र एक बार तथा प्रत्येक वर्ष 2/3का विज्ञापन/संदेश निःशुल्क प्रकाशित किया जाएगा.

☞संरक्षक सदस्यों का एक बार पूर्ण जीवन परिचय, प्रत्येक वर्ष 2/3 का विज्ञापन/संदेश निःशुल्क प्रकाशित किया जाएगा तथा उपहार स्वरुप प्रत्येक वर्ष अलग से 200रु0 तक की पुस्तकें भेंट की जाएगी.

युवा संपादक, शब्द शिल्पी, वंधी, मजी भाषा के सूत्रधार **दीपक मंजुल** जो कुछ मुलाकातों में ही राजजी को राज आपा कहने को बाध्य हो गये. देखिए उनके अपनी आपा के लिए विचार-

डॉ राज बुद्धिराजा

षष्टिपूर्ति और अमृत महोत्सव के बीच एक सप्तवर्णी मन

लगभग तीन साल पहले की बात है- जापान फाउंडेशन से एक निमंत्रण पत्र प्राप्त हुआ था. उसमें डॉ. राज बुद्धिराजा द्वारा किए जाने वाले काव्य पाठ को सुनने आने का निमंत्रण था. मेरे पास कई अन्य निमंत्रण भी थें. किंतु न जाने क्यों मैंने जापान फाउंडेशन वाले कार्यक्रम को चुना. शाम का समय, एक छोटे से कमरे में करीने से लगी कुर्सियां. चाय आदि की औपचारिकता के बाद हम सब जिसे जहां जगह मिली, बैठ गए. सभी आंगतुक प्रायः एक दूसरे से परिचित थे क्योंकि जो साहित्यकार या पत्रकार नहीं थे वे भी उसी रास्ते के राही थे. किस का नाम लूं और किसे छोडूं! बेहतर यही कि आपको बता दूं कि फाउंडेशन के अधिकारी द्वारा प्रारंभिक वक्तव्य के बाद डॉ. राज बुद्धिराजा ने अपनी सद्यः प्रकाशित काव्य-पुस्तक अभी-अभी साकुरा खिला है से कुछ चुनिंदा रचनाएं सुनाई. रचना पाठ के समापन पर पूरा कमरा अभिजात्य और शालीन तालियों के शोर में डूब गया. तालियों का शोर थमने पर सभी लोग डॉ. बुद्धिराजा को बधाई देने लगे. सभी के बधाई दे चुकने के बाद मैं उनके करीब गया और कहा-अद्‌भुत! उन्होंने मुझे पहचानने की कोशिश भरी नजरों से देखा. उनके मनोभाव को ताड़ मैंने अपना परिचय दिया और एनबीटी में संपादक होने के अलावा साक्षी भारत पत्रिका से अपने जुड़ाव की भी जानकारी दी तथा उनसे पत्रिका के लिए कुछ रचनाएं देने का आग्रह किया. वे तुंरत मान गई. डॉ. राज बुद्धिराजा, जिन्हें आगे से मैं 'राज आपा' कहूंगा, से औपचारिक रुप से मेरी यह पहली बातचीत थी; बेशक, मैं उन्हें पहले भी अन्य कार्यक्रमों में देख चुका था पर उनके काव्य पाठ को सुनने का मेरा पहला अवसर था.

तबसे यमुना में काफी पानी बह चुका और दुनिया के लिए डॉ. राज बुद्धिराजा मेरे लिए 'राज आपा' बन गई. कहने की जरूरत नहीं कि उन्हेंाने अपने वायदे के अनुसार हमारी पत्रिका साक्षी भारत के लिए अपनी कविताांए दीं, किताबें भी दीं और समय-समय पर आलेख आदि भी दिए. हमने भी उन रचनाओं को यथोचित सम्मान दिया, और आज मैं कह सकता हूँ कि उनकी रचनाओं को जितना पढ़ और समझ सका हूँ उससे कहीं अधिक उनके व्यक्तित्व को समझा है, उनके अंतर्मन को जाना है, उनकी भावनाओं-संवेदनाओं को पहचाना है. राज आपा से समय के साथ मेरी निकटता बढ़ती गई. मैं उनके जितना करीब जाता वह भी उतना ही अपनेपन के साथ मुझे प्रत्युत्तर देने लगीं. अब तक मैं जान चुका था कि यह वहीं राज बुद्धिराजा है जिन्हें जापान के सम्राट ने सन्‌ २००० में अपने देश के सर्वोच्च नागरिक सम्मान से नवाजा है... कि इनका हिंद-जापान एकता को बढ़ाने में महती अवदान रहा है.. ... कि जापानी भाषा को हिंदी के और हिंदी को जापानी के निकट लाने में इनकी भूमिका अनन्य है... कि हाइकू लेखन में वे अप्रतिम है.... कि कई विश्वविद्यालयों ने इनकी कृतियों को अपने पाठ्यक्रम में शामिल किया है.. .. कि...वक्त के साथ राज बुद्धिराज के कृतित्व के कितने ही पहलू मेरे सामने खुलने लगे. मुझे यह मालुम पड़ गया कि राज बुद्धिराजा के अंदर 'लेखक' जबर्दस्त 'लिक्खाड़' है. इनकी कलम से उपन्यासों के अलावा कविता के सोते भी प्रवाहित हुए है तो आलोचना और शोध जैसे शुष्क (!) काम भी हुए हैं. शब्दकोष (जापानी-हिंदी) निर्माण जैसे दुरूह कार्य भी उन्होंने किया है तो बाल साहित्य पर भी इनकी कलम चली है. इनकी कलम इतनी अधिक शब्दप्रसवा है कि अनगिनत शब्दो के जन्म के बाद भी इनकी लेखनी के समंदर से बस उतना ही जल ले पाया हूं जिससे आचमन भर किया जा सके. इनकी जो रचनाएं पढ़ सका वह एक संपादक के रुप में ही. अलावा इसके, इन्हें और अधिक जानने समझने की गरज से इनका कविता-संग्रह भी पढ़ा है. साकुरा के देश में उल्लेखनीय काव्य-संग्रह है. कम शब्दों में बड़ी बात कह जाना 'हाइकू' की विशेषता होती है. डॉ. राज यहां पूरी तरह सफल दिखती हैं.

डॉ. राज बुद्धिराजा के कृतित्व को थोड़ा बहुत जितना ही जान पाया इनके व्यक्ति और व्यक्तित्व को जानने की स्वाभाविक इच्छा जगी. एक बार दिल्ली के प्रीत विहार स्थित इनके निवास पर जाने का अवसर मिला तो मुझे लगा कि मैं कितने महान व्यक्तित्व से मिल रहा हूँ. दरअसल, वह सन्‌ २००५ की गर्मियों का वक्त था. दोपहर बाद मैं इनके निवास क्षेत्र में प्रविष्ट हुआ.

मकान खोजने में किचिंत दुविधा हुई तो फोन करके उनसे उनका पता जानने की चेष्टा की. इन्होंने जिस तरीके से बताया उससे शीघ्र ही मैं इनके निवास पर पहुंच पाने में सफल हुआ. राज आपा मुझे घर की पहली मंजिल पर लिवा ले गई और अपने कमरे में बिठाया. मौसम के अनुकूल ठंडा पिलाकर इन्होने मुझे तरोताजा किया. कमरे में सब कुछ करीने से रक्खा हुआ था. फ्रेम में मढ़ा वह फोटो भी मैंने देखा जिसमें जापान के सम्राट इन्हें सम्मानित कर रहे थे. इन्होंने वह कमरा भी दिखाया जिसमें वस्तुओं के रूप में जापान की बहुत सारी यादें संजोई हुई थी. राज आपा हर वस्तु के बारे में मुझे बताती चल रही थी. जैसे सादगी से भरी राज आपा खुद वैसी ही सादगी पूरे घर में पसरी हुई. ना-ना करते हुए भी चाय बनाकर ले आई थी राज आपा. घंटा-डेढ़ घंटा कैसे गुजर गया पता नहीं चला. मद्धम-शांत स्वर में, किंचित मुस्कान के साथ, तमाम बातें उन्होंने की-घर परिवार के संबंध में कुछ कम-कम लेकिन अपने जापान प्रवास और लंदन-रोम-पेरिस में विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में रहने की बातें, भारत-जापान मैत्री संगठन के अध्यक्ष के नाते, अपने क्रिया-कलापों के बारे में, मेरे भैया अरविंद गुप्ता द्वारा संचालित पत्रिका साक्षी भारत के लिए 'जापान-विशेष' के संबंध में तथा और भी बहुत कुछ. विदा होने के समय नीचे तक छोड़ने आई, फिर आने का न्योता भी दिया.

यों, दुबारा राज आपा के घर जाना नहीं हो पाया है, पर दिल्ली में कार्यक्रमों-गोष्ठियों में वो अकसर मिलती है, अपनी सौम्य मुस्कराहट बिखेरती है, मुझमें थोड़ा और अपनापन घोलती है और चली जाती है. मेरी राज आपा से पिछली लंबी मुलाकात इंडिया इंटरनेशनल सेंटर के कहवा घर में हुई जहां घंटे भर बैठकर बतियाने के क्रम में हमने कॉफी के दो कप सुड़के. फिर विदा बेला में अपनी नवीनतम पुस्तक जापानी सीखें देते हुए मुझसे कहा कि इस किताब पर अपनी प्रतिक्रिया दीजिएगा. कहना न होगा कि मैंने शीघ्र ही अपनी प्रतिक्रिया उन्हें दे दी-पुस्तक लाजवाब है. जापानी सीखने के इच्छुक हिंदी प्रेमियों के लिए 'गीता' है यह पुस्तक. राज आपा ने मेरी प्रतिक्रिया से राहत की सांस ली. उन्हें लगा उनका श्रम सार्थक रहा. वाकई, पुस्तक है ही वैसी कि जिसकी बिना प्रशंसा किए रहा नहीं जा सकता.

राज आपा से फिर एक मुलाकात एक सितंबर, २००६ को हुई. उन्हें उस शाम नई दिल्ली स्थित राजेंन्द्र भवन सभागार में साक्षी भारत सम्मान से सम्मानित किया जाना था. साक्षी भारत पत्रिका के ५ साल पूरे होने के अवसर पर पत्रिका द्वारा उस आयोजन के अवसर पर सात अन्य व्यक्तियों को भी उक्त सम्मान दिया जाना था. राज आपा समय पर आ गईं थी. बेशक कार्यक्रम बारिश की वजह से थोड़ा विलम्ब से शुरू हुआ किंतु उन्होंने उसे सहज भाव से लिया. वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. रामदरश मिश्र द्वारा साक्षी भारत सम्मान प्रदान किया गया था. उस कार्यक्रम में आयोजक की ओर से शामिल होने के कारण आपा से कुछ विशेष बातचीत नहीं हो पाई; हां, इतना भर पाया कि जब वे अपने बेटे के साथ आईं तो उन्हें सभागार तक लिवा ले गया और कार्यक्रम समापन पर उन्हें उनकी गाड़ी तक छोड़ आया. बेहश खुश थीं राज आपा उस दिन. कार्यक्रम में मेरे द्वारा संपादित पत्रिका के साहित्य विशेषांक का लोकार्पण भी हुआ था और राज आपा ने उस अंक के लिए हमें अपने पाकिस्तान प्रवास का एक संस्मरण दिया था. पत्रिका देखकर भी बेहद खुश हुईं.

फोन पर आपा से जब-तब बातचीत होती ही रहती हैं. बातचीत, व्यवहार में वह जितनी मिलनसार और सौम्य हैं इसे देखकर नहीं लगता कि वह देश के शिखर वर्तमान दस साहित्यकारों में एक हैं. राज आपा सत्तर बरस की हो गई हैं, यह मानने को मन नहीं करता. वह लेखकीय ऊर्जा से अब भी भरी हुई है-जनसत्ता, दैनिक जागरण तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओं में वह जब तब दिख जाती है. उनकी रचना पढ़ने के तुंरत बाद मैं प्रतिक्रिया देना नहीं भूलता. गत वर्ष जनसत्ता में उनकी बड़ी ही मार्मिक कहॉनी पढ़ी थी. मैंने तुंरत उन्हें फोन लगाया और अपनी प्रतिक्रिया दी. मेरी त्वरित प्रतिक्रिया पर उन्होंने आभार जताया. राज आपा लिख रही है, खूब-खूब लिख रही है, छप रही है-बेहद सक्रिय हैं राज आपा. राज आपा उम्र का शतक पूरा करें मेरी शुभकॉमना हैं. आपसे मिलना, साथ बैठना, बतियाना भला लगता है. आप यूं ही सृजनरत रहें, सक्रिय रहें-मेरी अशेष शुभकामनांए आपके साथ हैं. उगते हुए सूरज के देश जापान ने तो आपकी योग्यता और प्रतिभा को जाना, पहचाना और अपने देश के सर्वोच्च्य नागरिक सम्मान से सम्मानित भी कर दिया लेकिन अपने ही देश की सरकार डॉ. राज बुद्धिराजा के साहित्य और भारत-जापान मैत्री के क्षेत्र में उनके महती अवदान को कब देखेगी और उन्हें पद्म सम्मान देकर कब अपनी भूल का परिमार्जन करेगी यह तो आने वाला समय ही बताएगा.

शिवाजी कॉलेज के हिंदी विभाग में कार्यरत **डॉ. मोहन सावंत**, कन्यादान पढ़कर डॉ. राज के व्यक्तित्व व कृतित्व पर चार वर्षो तक अध्ययन करने के पश्चात् उन पर चार सौ पृष्ठों का ग्रंथ लिखकर पी.एचडी. की उपाधि के लिए घोर श्रम किया. देखिए वो क्या कहते हैं अपने शोधक के बारे में

डॉ० राज बुद्धिराजा:सशक्त महिला साहित्यकार

आधुनिक युग की चुनौतियों को स्वीकार करने वाली महिला साहित्यकारों में राज बुद्धिराजा बहुचर्चित हैं. उनका लेखन बहुमुखी है. उन्होंने लगभग सभी विधाओं में बृहद, मौलिक और सशक्त लेखन किया हैं. उनकी विविध विषयों पर लिखित रचनाएं हमें सोचने को विवश करती है. उनके साहित्य से स्पष्ट होता है कि हम चाहें जितना २१वीं सदी की ऊँची उड़ान उड़ लें; लेकिन आज भी हमारे घरों में नारी की घूटन और टूटन को देखा जा सकता है.

साहित्य में नारी को पुरूष के समानांतर दिखाना और उसे स्वयं के अस्तित्व से परिचित कराना डॉ० राज के साहित्य का उद्देश्य रहा हैं. वे नारी का वैचारिक विकास चाहती है. उनके साहित्य की ज्यादातर नारियॉ कामकाजी है. जो लेखिका के व्यक्तिगत जीवन से पूर्णतः प्रभावित नजर आती है. उनके व्यक्तित्व के कई पहलू उनके साहित्य में उभरते हैं. उनकी दृष्टि में शब्द ब्रहम का स्वरूप है जितना इससे साक्षात्कार होता चला जाता है व्यक्ति इसके गूढ़ रहस्यों तक पहुँचता जाता हैं. डॉ. राज का साहित्य जगत केवल भारत तक ही सीमित नहीं है अपितु जापान की सांस्कृतिक धरोहर बन गया हैं. यह भारत-जापान के बीच सांस्कृतिक सेतु का कार्य करता हैं.

महिला साहित्यकारों में डॉ. राज का साहित्य कई तरह से अलग ठहरता हैं. जैसे अन्य महिला साहित्यकारों से ज्यादा इनके साहित्य में नारी विविध रुपों में सॉस लेती हुई दिखायी देती है. जैसे-असहाय माता, विद्रोही नारी, कामकाजी नारी, संघर्षशील नारी, मोहभंग की स्थिति से गुजरने वाली नारी, कुंठित नारी आदि. इनके साहित्य में प्रेम के विविध रुपों का यथार्थ चित्रण किया गया हैं. इनके साहित्य में नारी प्रेम में धोखा खाने के बावजूद भी विध्वंसकारी प्रवृत्ति से बहुत दूर हैं. वह प्रेम में भोग से ज्यादा त्याग को महत्वपूर्ण मानती है. अपने अकेलेपन से छुटकारा पाने के लिए वह समाज से और स्वयं से भी संघर्ष करती रहती हैं.

डॉ. राज ने पात्रों के मानसिक द्वंदों को मनोवैज्ञानिक रूप देकर अभिव्यक्त किया हैं. आधुनिक युग में मनुष्य की बढ़ती हुई मनोवैज्ञानिक समस्याओं का यहॉ सफल अंकन किया हैं. स्त्री-पुरुष के टूटते-बनते संबंधों पर साहित्य रचना करके लेखिका ने इस परंपरा को अत्यंत विश्वास के साथ आगे बढ़ाया है. लेखिका विश्वास है कि स्त्री-पुरुष के बीच अहं की भावना युग-युग से चलती आ रही है और रहेगी लेकिन घर तभी बनता है जब दोनों में प्रेम की भावना हों. लेखिका ने स्त्री-पुरुष दोनों की दृष्टि से संदेश दिया हैं. लेकिन यह संबंध कहीं भी उच्छृंखल नहीं बने हैं.

डॉ. राज अन्य विधाओं के समान ही आलोचना के क्षेत्र में भी महारत हासिल की हैं. इस साहित्य में उनकी मौलिकता, बौद्धिकता और भाषिक सामर्थ्य का अपूर्व मिलाप हुआ हैं. उनका संस्मरण साहित्य पैनी दृष्टि, भारतीय संस्कृति तथा मूल्यों को प्रकट करता हैं.

डॉ. राज के साहित्य की भाषा स्वयं अनुभूति का विषय हैं. भाषा की अदभूत शक्ति, शब्दों का चयन, शाब्दिक वैविध्य, वाक्याशों को भावात्मक रुप देने का प्रयास लेखिका की भाषा पर पकड़ स्पष्ट होती हैं. असामान्य शब्दों को सामान्य किंतु अलंकृत वाक्यांश बनाकर शैली में विविधता पिरोने में डॉ. राज बुद्धिराजा सफल रही हैं. आपके साहित्य की भाषा यथार्थ को पकड़ने में सक्षम, प्रयोग की कुशलता तथा भावात्मकता से युक्त हैं.

राज बुद्धिराजा साठोत्तरी महिला साहित्यकारों की परंपरा को सशक्त रुप देने में निसंदेह सफल हुई हैं.

चलते-चलते

जापान सम्राट से अलंकरण मिलने पर आपको हार्दिक बधाई।

जी.बी.जी कृष्णमुर्ति, पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त

डॉ. राज का साहित्य उच्च कोटि का है.

जगमोहन, पूर्व राज्यपाल

केन्द्रीय हिंदी निदेशालय में उपनिदेशक के पद पर कार्यरत **कुलदीप 'दीपा'**, जो डॉ० राज के समक्ष अपना हर राज खोलने को आतुर रहती है. अपनी गहरी नजर से डॉ. राज के बारें में क्या कहती है-

गंभीरता और मधुरता की मूर्ति : डॉ० राज बुद्धिराजा

डॉ. राज बुद्धिराजा को याद करते ही आंखों के सामने एक कोमल सी जापानी गुड़िया आकर खड़ी हो जाती है जो मुस्कराकर बाहें फैलाए अपनी स्निग्धता को और अंदर तक उतारने के लिए मानों करीब से करीब आ गई हो. जब भी उनसे मिलती हूँ उनका यह रुप रास्ते की सारी थकान को भुला देता है.

डॉ० बुद्धिराजा से मेरा परिचय करीब दस वर्ष से हैं जब भिरडी में एक नवलेखक शिविर में हमारी पहली मुलाकात हुई थी. दस दिन तक दिन-रात साथ रहने का यह पहला सौभाग्य था. बाद में यह सौभाग्य कई बार प्राप्त हुआ. पहली मुलाकात में उनकी उम्र और उम्र से भी बड़े उनके अनुभवी व्यक्तित्व से मिलकर थोड़ी हिचकिचाहट हुई थी, किंतु धीरे-धीरे उनकी सहज आत्मीयता ने मुझे भी सहज कर दिया और उनके व्यक्तित्व के कई पहलुओं से मेरा परिचय करा दिया जो क्रमशः अंतरंग होता गया.

उनके जीवन के अनेक पहलू ऐसे रहे हें जो अपने से लगते है, जैसे समाज में व्याप्त दिखावटीपन, रिश्तों का बौनापन, विदेश यात्राओं के खट्टे-मीठे अनुभव. चूंकि वे एक लंबे अर्से तक हिंदी पढ़ाने के लिए जापान में रही हैं. वहॉ के रहन-सहन, खान-पान, विचार-धारा के बारे में अनुभव ऐसी सहजता से सुनाती है कि जापान के जन-जीवन को सहज ही साकार कर देती है. समय-समय पर छोटी-छोटी प्रदर्शनियां आयोजित करके वे जापानी संस्कृति से साक्षात्कार कराती रहती हैं. कई बार उनके पढ़ाए जापानी छात्रों से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ है. शिक्षक और शिष्य के बीच के उस गरिमामय वातावरण को देखने का अवसर मिला जिसकी झलक आज बहुत कम देखने को मिलती हैं. भारत में आने वाले जापानी दूतावास के अधिकारिया (उनके छात्र रह चुके) का आगमन के समय स्वागत और विदाई के समय उनका अपनत्व से भरा व्यवहार भारतीय अतिथि-धर्म का जीता-जागता उदाहरण हैं. ऐसे अवसरों पर हम जैसे साधारण व्यक्तियों का मेहमानों से परिचय कराना और उनका परिचय देना ऐसा अपनत्व भरा होता है कि आज के इस भाग-दौड़ के युग में भी 'वसुधैव कुटुंबकम्' का स्वप्न प्रतीत होता है. यह राज बुद्धिराजा जैसे गहन और मधुर व्यक्ति की ही देन हो सकता हैं.

मित्रों और रिश्तों के प्रति अपने उदार मन को वे कभी संकुचित नहीं होने देती. अपनत्व की भेंट देने का कोई भी अवसर वे नहीं चूकने देती. जब भी मिलने का कार्यक्रम बनाती हूँ, बार-बार मना करने पर भी अपने हाथों से खाना बनाकर आग्रहपूर्वक खिलाती हैं. उनका वह आग्रह मन को ऐसा अतिरंजित कर देता है कि कुछ कहने को शब्द नहीं ढूंढ पाती.

इतने गरिमामय रुपों के भीतर कभी-कभी ऐसे मासूम से निश्छल व्यक्तित्व के दर्शन होते हैं जिसे अपने आस-पास होने वाले हर अच्छे-बुरे कार्य से और कार्य करने वाले व्यक्ति से सरोकार रहता है. एक बार हम एक शिविर में भाग लेने के लिए तिरुवनंतपुरम-केरल, गई हुई थी. हमेशा की तरह एक ही कमरें में हम ठहरी थी. उसी शिविर में भाग लेने के लिए एक सज्जन महाराष्ट्र से आए थे, हम दोनों कही घूमने के लिए कमरे से बाहर निकलतीं, वे भी अपने कमरे से बाहर आकर अक्सर पूछते-आप लोग कहां जा रही हैं, क्या मैं भी चलूं. कभी हम उन्हें अपने साथ ले जाती कभी मन नहीं होता. एक दिन ऐसे ही जब उन्होंने पूछा-'आप लोग कहां जा रही है', तो बुद्धिराजा जी धीरे से मेरे कान के पास आकर बोली-ये "दाल-भात में मूसलचंद" हमेशा हमारे पीछ पड़ जाते हैं. सुनकर लगा कि गंभीरता की उस मूर्ति के अंदर कितना सहज और निश्छल मन है जो अपनी स्वतंत्र उड़ान की डोर अपने ही हाथों में रखने की चाह लिए हैं.

ऐसे कितने ही संस्मरण है जिनकी झलक उनकी कहानियों में जहॉ-तहां मिलती हैं. उनके कहानी संग्रह 'हरा समंदर' में कहानियों के नायक-नायिकांए ऐसे छोटे-छोटे लोग हैं जिन्हें उपेक्षित समझ कर कोई उनकी ओर ध्यान नहीं देता. किंतु डॉ० बुद्धिराजा ने उनके माध्यम से समाज के छोटे-बड़े सभी वर्गो को एक-दूसरे के साथ सरोकार रखने का जो सूज दिया है वह निश्चय ही मनुष्य के मनुष्य के प्रति सहज आकर्षण और प्रेम की मिसाल है. 'अभी-अभी साकुरा खिला है' काव्य संग्रह की छोटी-छोटी कविताएं जापान की प्राकृतिक छटा का दर्शन कराने के साथ-साथ मानव मन की

उस मासूमियत को भी उजागर करती हे जो थके हारे मस्तिष्क को ऐसी निर्मल धारा की ओर बहा ले जाती है जिसमें केवल स्निग्धता और सहजता की सुगंध रहती है.

जीवन की गंभीर और मधुर धारा में बहते हुए वे जहां कुछ असंगत होते हुए देखती है; वहां उनका अन्याय को न सहने वाला मन एकाएक कठोर हो उठता है. साहित्यिक संगोष्ठियों में जहां भी कुछ असंगत लगता है वहां वे एकदम बुलंद आवाज में उसका विरोध करती हैं. तर्क द्वारा ही और गलत का निर्णय करती हैं. कभी किसी दबाववश ऐसा कोई काम नहीं करती जो गलत हो और किसी को कष्ट पहुंचा सकता हो. अपनी कथनी और करनी की प्रासंगिकता और प्रामाणिकता की कसौटी को सिद्ध करने वाली उस महान हस्ती को मैं शत-शत नमन करती हूँ.

++++++++++++++++++++

चलते-चलते

डॉ० राज इज ए वेल नोन राइटर

शोभना नारायण, प्रसिद्ध नृत्यागंना

+++++++++++++++++++

जापान पर इनका पूर्ण अधिपात्य है. जापानी से हिंदी अनुवाद बेजोड़ हैं.

वेणूगोपाल, सचिव, इंडिया इंटरनेशनल

++++++++++++++++++

डॉ० राज की कहानियों की बुनावट एकदम सरल तथा भाषा एकदम आम आदमियों की है. **यंग इंडियन**

युवा रचनाकार, मधुशाला की मधुबाला, अपराध और कलाम चालीसा जैसी कृति के रचनाकार **राजेश सिंह** क्या सोचते है सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ० राज बुद्धिराजा के बारे में-

जीवन ज्योंति जले

तीर्थराज प्रयाग की धरती, ऋषि मुनियों की तपोस्थली।
वहीं पधारी राज बुद्धिराजा, जैसे लगती देव कली।।
विश्व स्नेह समाज संस्थापक, गोकुलेश्वर करते वंदन हैं।
बड़े प्यार श्रद्धा से कहते, बुद्धिराजा विश्व की चंदन हैं।।
साहित्य श्री की सर्वश्रेष्ठ सम्मान, उनको किये समर्पित हैं।
सर्वोच्च नागरिक सम्मान जिसे, जापान द्वारा भी अर्पित है।।
ऐसी महिमा मंडित मनीषी, कहीं नहीं है मिलने वाली।
कितना है सौभाग्य हमारा, हुई जो दर्शन देने वाली।।
हिन्दी संस्कृत; जर्मन; अंग्रेजी, भाषा उनकी चेरी है।
कविता और काव्य ग्रंथो से, जिनकी भरी तिजोरी है।।
महिला शिरोमणी; रत्न शिरोमणी, भारतीय प्रतिष्ठा का सम्मान।
रिसर्च फेलोशिप के साथ, राष्ट्रीय एकता मीडिया सम्मान।।
सब गुण आगर अमृत जस वाणी, उनकी अमर कहानी है।
विश्व स्नेह भी याद करेगा, दिया जो अमिट निशानी है।।
राजेश कुमार की चिर अभिलाषा, पूर्ण हुई है दर्शन से।
सारा विश्व यह ज्योंतित होगा, बुद्धिराजा के मार्ग दर्शन से।।
मान सम्मान पुरस्कारों की धनी, श्रीमती राज बुद्धिराजा हैं।
शत आयु रहें मंगल हो जीवन, समय का यही तकाजा है।।
जो जीवन ज्योति जलाया राजा, वह जीवन ज्योति जलाना है।
मानव जीवन उसी से जीवित, संसार भी उसी से चलाना है।।

++++++++++++++++++++

स्नेह बाल प्रतियोगिता-०२

इस प्रतियोगिता में ५ से १२ वर्ष तक के उम्र के बच्चों को नीचे दिए गए विषय पर चित्र बनाकर भेजना होगा. प्रथम स्थान पाने वाले बाल चित्रकार के चित्र को प्रकाशित किया जाएगा तथा द्वितीय एवं तृतीय स्थान पाने वाले का नाम, पिता का नाम, कक्षा व पता छापा जाएगा साथ ही प्रमाण पत्र भी दिया जाएगा. कूपन लगाना अनिवार्य होगा.. **झगड़ा मत करो** संपादक, विश्व स्नेह समाज, बाल चित्र प्रतियोगिता न०१, एल.आई.जी. -६३, नीम सरॉय कॉलोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद

कूपन लगाना न भूलें

प्रतिभागी का नामः..
पिता का नामः...................................कक्षाः...................
स्कूल का नामः...
पताः..

डॉ० राज की ३८ वर्षों तक कॉलेज की सहयोगिनी **डॉ० पुष्पलता**, जो हर तरह के तराजू में उन्हें अपनी नजरिए से तौलने की कोशिश करती है-

मेरी सहयोगी मेरी मित्र

बुद्धिराजा से मेरा परिचय ३८ वर्ष पुराना है. कॉलेज में हमारा आगमन एक ही दिन हुआ था और तब से हम एक ही विभाग में सहयोगी के रुप में कार्यरत रहें. सहयोगी से अधिक वे मेरी अंतरंग मित्र है. एक साथ बैठकर भोजन करना, घूमना, फिरना, यात्राएं करना, सब कुछ हमारी मित्रता के अभिन्न अंग हैं. उनके साथ रहकर मुझे लगता है कि मेरा हर दिन एक उत्सव है, उनके साथ जब उन्हीं की कार में बैठकर यात्रा करती हूँ तो लगता है मैं आसमान की यात्रा कर रही हूँ, या सितारों को छू रही हूँ और किसी अनजाने देश में जा रही हूँ. जहॉ कोई और हस्तक्षेप करने वाला नहीं होगा. केवल होंगे तो हम दोनों और एकान्त में बैठ अपनी बातों से सारी दुनिया को समेट लेगें. सचमुच मेरी जिन्दगी का सफर बहुत खुशनुमा बन जाता है जब वे मेरे साथ होती है.

हिन्दी साहित्य जगत में मेरी मित्र श्रीमती राजबुद्धिराजा जी को कौन नहीं जानता होगा. साहित्य में उनका प्रवेश जीवन संघर्षो के बीच से गुजरते हुए हुआ है. लेकिन उन संघर्षो ने उन्हें कटुता और आक्रोश नहीं दिया, बल्कि किसी हद तक सहिष्णुता और सदाशयता ही दी है. उनके सामने साहित्य जीवन के दो लक्ष्य सर्वोपरि रहे है-एक स्वस्थ हिंदी की प्रतिष्ठा करना, दूसरा अपने साहित्य द्वारा सामाजिक संघर्षो को मूर्त रुप देना. उनकी दृष्टि शब्द ब्रहम का स्वरुप है, जितना इससे साक्षात्कार होता चला जाता है व्यक्ति इसके गूढ़ रहस्यों तक पहुँचता जाता है.

मेरी मित्र वैसे बहुत मितभाषी है, जहॉ तक मैं समझती हूँ जैसे कलात्मकता, सुरुचि और शालीनता उनके व्यक्तित्व के अभिन्न अंग हैं वैसे ही बोलते समय भी वे शब्दों के चयन में अपनी सुरुचि का परिचय देती है. चिन्तन और मनन करने के बाद ही वे अपनी बात कहती है. वे सोचती है ऐसी बात कभी नहीं करना चाहिए जिससे किसी को पीड़ा पहुंचे और किसी तरह की हानि हो. इसलिए पहले तोलो और फिर बोलो और वो भी ऐसी मीठी वाणी जो तन-मन दोनों को शीतल कर दें. पर सब लोग ऐसा कहॉ कर पाते है यदि ऐसा हो पाता तो ये पारिवारिक झगड़े होते ही नहीं.

वैसे तो बुद्धिराजा जो कि मित्रों की संख्या अनगिनत होगी क्योंकि समाज के हर क्षेत्र के प्राणी उनके मित्र है. पर कभी-कभी मुझे लगता है कि हम दोनों ने नितान्त निजी पलों को भी जिया है. अपने घर के सुख-दुःख, खट्टे-मिठ्ठे, तीखे अनुभवों में मुझे उन्होंने अपना साझीदार माना है. उन्हीं के शब्दों में "इस जीवन यात्रा में चलते-चलते, जिस भी हाथ ने मेरे पांव से कांटे निकालने चाहे वे हाथ मेरे अपने हाथों से अधिक अपने हो गये" मुझे लगता है मेरा हाथ भी उनके हाथो में शामिल हो गया है. उनके इन शब्दों से क्या नहीं लगता कि वे कितनी स्नेहिल और ममतामयी है.

कॉलेज में उनका व्यक्तित्व सबसे अलग रहा है. बोलती तो जरूर कम है पर जिससे भी स्टाफ में मिलती है बहुत आत्मीयता से. टीचिंग स्टाफ हो चाहे कर्मचारी वर्ग के लोग सभी के साथ उनका भद्रता का व्यवहार होता है. इसलिए कॉलेज में सभी उनका सम्मान करते है. कॉलेज की प्राचार्या समय-समय पर बदलती रही है पर सभी ने इन्हें मान और सम्मान दिया. समय-समय पर बुद्धिराजा जी कॉलेज में सेमीनार, कविगोष्ठियों एवं विद्वानों के लेक्चर आदि कराती रही है. कॉलेज को भी आप पर गर्व है कि साहित्य की जानी मानी हस्ती सौ से अधिक पुस्तकों की लेखिका और कई सौ पत्र-पत्रिकाओं में छपने वाली विदुषी हमारे ही कॉलेज से हैं. इतना सब होने पर भी कहीं गर्व नही अहं नही अपितु विनम्रता और सरलता ही रहती है उनके व्यवहार में. गम्भीर इतनी है कि समय-समय पर अपने साहित्य के लिए राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित होने पर भी कभी किसी से चर्चा तक नहीं करती केवल पत्र-पत्रिकाओं में पढ़कर लोग उन्हें बधाई देते है. भला ऐसी सहयोगी मित्र को पाकर मैं गौरव का अनुभव कैसे नहीं करुँगी?

जहॉ बुद्धिराजा जी के जीवन का एक पक्ष गम्भीर चिन्तन मनन और लेखन का है वहीं दूसरा पक्ष सहज हास परिहास और मुक्त विचारण का है. वे चाहती रही है कि थककर खूब घूमें, भ्रमण करे किसी शान्त पर्वतीय स्थल पर जाये जहॉ पूर्ण शान्ति हो, कोई तनाव न हो और न कोई आपाधापी केवल आनन्द और आनन्द.

उनके साथ एक यात्रा मैंने पर्वतीय स्थल पचमढ़ी की थी. हम दोनों ने इस यात्रा का भरपूर आनन्द लिया था. दिन भर खूब घूमते, खाते पीते, कहीं अनकहीं बातें करते और थककर रात

को सो जाते. रात सोते में पंचमढी के नये-नये रुप उद्‌घाटित होते और सुबह हम अपने-अपने सपनों को साकार करते, और हमें लगता, यह सतपुड़ा की रानी हमें अपने मोहपाश में आबद्ध कर लेगी. दिल्ली आकर जब स्टेशन से अलग-अलग अपने घर का रास्ता नापते तो वह पल हम दोनें के लिए एक अनकहा पल होता.

इसी तरह चित्रकूट, खजुराहो, मंसूरी, शिमला, नैनीताल, हैदराबाद आदि अनेक यात्राओं के अनुभव हम दोनों ने शेयर कि है और ईश्वर की कृपा रही तो इसी तरह करते रहेगें. कॉलेज में भी खाली वक्त में हम धूप सेकते कभी कथा-कहानी की बात करते और फिर कभी भी घूमने निकल जाते. अधिकत्तर बुद्धपार्क, इन्डिया गेट आदि स्थान घूमने के लिए चुनते क्योंकि ये स्थान शोरगुल से कुछ शान्त स्थल होते. हमारी बातचीत घर परिवार से रहित होती उसमें बस पतझड़, शरद, नदी पहाड़, पशु-पक्षी, सम्मिलित होते और हमें खुशी देते. एक ही दिन कालिन्दी कॉलेज में हम नौकरी के लिए आए थे मन में अनेक सपने संजोए हुए. पैतीस वर्ष पंख लगाये कब उड़ गये पता हीं नहीं चला. हमारी बातें इतिहास के पन्नों पर चाहे नहीं भी लिखी गयी हो पर हृदय में अपनी अमिट छाप छोड़ चुकी है.

साहित्यकार होने के साथ मेरी मित्र का एक रुप वैदिक विचारधारा का भी रहा है. उनका जन्म एक ऐसे आर्य परिवार में हुआ है जहॉ साधु सन्तो और शिक्षाविदों का सम्मान होता रहा है. जहॉ वेदमंत्रों की ध्वनि निरन्तर उनकी यज्ञशाला से आती रहती है. प्रभु आश्रित जी एवं स्वामी दीक्षानन्द जी जिनके कुलगुरु रहे हैं. बुद्धिराजा जी ने एक पुस्तक 'सौम्य संत ऋषिकेश में रहकर प्रभु आश्रित जी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर लिखी हैं. विचारों से एवं कार्यो से वैसे भी धार्मिक वृत्ति की हैं. भोजन प्रारम्भ करने से पूर्व मन्त्र पाठ करना, प्रातः और सायं यज्ञ एवं सन्ध्या करना तथा साधु सन्तों को भोजन कराना इतना सब कुछ उनके स्वभाव सम्मिलित है. उन्हीं के शब्दों में "वैसे तो अन्न जल क्या सभी कुछ ईश्वर की ही देन है, मेरे संस्कार, मेरे कर्म, मेरी आस्था, मेरा अध्ययन और मेरा लेखन सभी कुछ तो उसी का है. उसी की दी हुई वस्तु से यदि कभी माध यम बन जाऊँ तो इससे ज्यादा और सौभाग्य क्या होगा."

बुद्धिराजा जी समय-समय पर घर या बाहर अनेक गोष्ठियों का आयोजन भी करती रहती है. इन गोष्ठियों में उनके पारिवारिकजन, कवि मित्र, पत्रकार एवं साहित्यकार मित्र कलाकार एवं विदेशी मित्र, सहयोगी एवं बालमित्र सभी सम्मिलित होते है. काव्य-पाठ, नृत्य एवं संगीत, सभी कुछ सुनने को मिलता है, साथ-साथ पेय पदार्थो का भी आस्वादन होता रहता है. घंटो आनन्द और उल्लास का वातावरण रहता है. सभी एक दूसरे से मिलते है, गिले शिकवे भी करते है और जानी मानी हस्तियों से मिलना अपना सौभाग्य भी समझते हैं. गोष्ठी के अन्त में स्वादिष्ट भोजन की व्यवस्था रहती है जिसे बुद्धिराजा जी स्वयं देखती है अपने हाथ से प्यार से परोसती और खिलाती है. वास्तव में अतिथि सत्कार करना उनका एक बहुत बड़ा शौक है. उन्हीं के शब्दो में "जब-जब मैं रसोई में जाती हूँ तो सोचती हूँ कि आज कौन अतिथि यहॉ का अन्नजल ग्रहण कर मुझ आर्शीवाद देगा."

अपने परिवार एवं संबंधी रिश्तेदारों के लिए भी उनके मन में प्यार है. जब भी कहीं शादी ब्याह हो या कोई भी संस्कार हो निमंत्रण मिलने पर सब जगह जाती है. अपने बच्चों को उन्हेंने अपने संस्कार देने में की कोई कोर कसर नहीं छोड़ी. उनकी बेटी सुनिता भी उन्हीं की तरह ही अपने क्षेत्र में पर्याप्त ख्याति अर्जित की है. पौत्र त्रियम्बक के लिए उनके मन में पर्याप्त ममत्व है. अपनी मॉ के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा है.

व्यक्तिगत जीवन में भी यदि कोई संकट की घड़ी आती भी है तो उनका विश्वास डगमगाता नहीं आस्थायें स्थिर रहती है. मेरी मित्र निश्चय के अंगूरी सपने हर समय अपनी आंखो में संजोए रखती है. पूरे संसार का भ्रमण उन्होंने अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा ही किया है. जब वे पहली बार मॉरिशस गई तो वहीं हवाई अड्डे पर उनकी भेंट एक जापानी सज्जन मि. दोई से हुई. केवल पांच मिनट की बातचीत से ही उन्होंने इनकी योग्यता का अनुमान लगा लिया और तोक्यों विश्वविद्यालय मं अतिथि प्रोफेसर के रुप में निमंत्रित किया.

जापान में रहकर उन्होंनें न केवल वहॉ के चारों द्वीपों की यात्रा की, सांस्कृतिक नगरी नारा के भव्य मन्दिर देखे और जापान की संस्कृति को महसूस करने की कोशिश की. वहीं पर उनकी मुलाकात दूसरे देशों के प्रोफेसरों से हुई और जो आज तक उनके मित्र है. जब भी वे भारत आते हैं इनसे बिना मिले नहीं जाते. जापान रहकर बुद्धिराजा जी ने जापानी भाषा साहित्य का अध्यन किया, और पुष्प सज्जा सीखी. अपनी संस्कृति के साथ उनकी संस्कृति का आदान प्रदान किया. इसके लिए उन्हें जापान का सर्वोच्च पुरस्कार वहॉ के सम्राट द्वारा दिया गया.

जापान जाते समय बुद्धिराजाजी ने

लन्दन, पेरिस, रोम सहित अनेक देशों की यात्राएं भी की. उन्होंने मुझे उन देशों के अपने अनुभव भी सुनाएं. जापान से बुद्धिराजा जी जब वापिस लौट आई है तो भी यहाँ जापानी मित्र अपनी उपस्थिति से जापान में रहने का बोध कराये रखते हैं. जब कोई मित्र उनके लिए सौगात लेकर आता है तो वे ईश्वर से प्रार्थना करती है कि हे प्रभु! मेरा मन इतना बड़ा कर दो कि उस मेरे मित्र का पूरा का पूरा प्यार समा जाए, एक बूंद भी प्यार की बाहर न जाने पाए.

मेरी मित्र को हस्त रेखायें पढ़ने का भी शौक है. ज्योतिष शास्त्र अगाध विश्वास होने के कारण उसका पर्याप्त ज्ञान, जन्मकुंडली बनाना आदि बहुत कुछ शामिल है. डॉ. सरोजनी महिषी इस ज्ञानवृद्धि में उनकी सहयोगिनी रही है. बुद्धिराजाजी के शब्दो में "जब मैं खाली होती हूँ सब कुछ छोड़ कर अपनी हथेलियों की रेखायें पढ़ने लगती हूँ. कैसी है ये हथेलिया, छोटी-छोटी रेखायें जो मनुष्य को एकदम बड़ा कर देती है."

उनकी कलात्मक रुचि में उनके वस्त्र विन्यास, आभूषण प्रियता, गृहसज्जा, पांच सितारा होटल में मन पसन्द भोजन करना सभी कुछ सम्मिलित है. मैने भी बड़े से बड़े होटल में उनके साथ बैठकर हर तरह का भोजन किया है. इसे मैं अपना सौभाग्य ही मानूंगी. उनके व्यक्तित्व की गरिमा ही ऐसी है जो सभी को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है.

मेरी सहयोगी मित्र यद्यपि ३८ वर्षो से मेरे साथ हैं पर मुझे लगता है कि मैं उन्हें बिल्कुल भी नहीं समझ पायी हूँ. न जाने कितने भाव उन्हीं तक सीमित होगें और कितना कुछ अनकहा रह गया होगा ऐसा मुझे हमेशा लगता रहा है. जहाँ तक मैं उन्हें समझ पाई हूँ वे अपने जीवन का हर पल उत्सव की तरह मनाना चाहती है. हर समय खुशी के सागर में डूबी रहना चाहती है. सुन्दर-सुन्दर आभूषण और परिधानों से अपने को सुसज्जित करना चाहती हैं. हाथ की उंगलियों में राशि के रत्न धारण करने में भी खुशी का अनुभव करती है.

बुद्धिराजा जी की दृष्टि में जो मिल जाय वह तो ठीक है हीं, जो नहीं मिला तो फिर मिल जायेगा. ऐसा आशावादी दृष्टिकोण रहता है उनका. यही विचार उनके लेखन के प्रत्येक शब्द में है हर स्थल पर आशा ही है निराशा नहीं. उनकी कहॉनियॉ और उपन्यासों के पात्र हमेशा खुशी के एक विचित्र सम्मोहन में अपने आपको बांधे रखते हैं. कविताओं में भी रंग रंग है, चाहे वे साकुरा के रंग हो चाहे जीवन के. सम्पूर्ण साहित्य में आनन्दतत्व पूरी तरह विद्यमान हैं. उन्हीं के शब्दों में "मैं अपनी खुशनुमा जिन्दगी को बार-बार अपने पास बुलाना चाहती हूँ." कभी-कभी मुझे लगता है कि नव वधु की तरह वह सतरंगी परिधान, रत्न जड़ित आभूषण और पायल पहने मेरे बिल्कुल पास खड़ी हैं."

मैने अपनी मित्र से बहुत कुछ सीखा और समझा है, यहाँ तक लेखन की प्रेरणा भी मुझे उन्हीं से मिली है. जब भी उनसे मिलती हूँ तो पूछती है कि मैंने क्या लिखा, क्या पढ़ा? जो कुछ मैंने उनसे सीखा है उसी को पन्नों में उतारने का प्रयास किया है. नहीं जानती उनके स्नेह की धरोहर कहाँ तक संजोकर रख पाऊँगी. भगवान से यही प्रार्थना करती रहूँगी कि मैं उनका स्नेह उनकी आत्मीयता इसी तरह जीवन भर प्राप्त करती रहूँ..

चलते-चलते

हमारे देश की महिलाएं ऐसे व्यक्ति से कुछ सीखें जो साधारण को असाधारण बना देता है. राजेन्द्र अवस्थी

साहित्यकारों/सदस्यों के लिए

१.पत्रिका के लिए लेख अथवा प्रकाशन सामग्री कागज के एक ओर बायी तरफ पर्याप्त हाशिया छोड़कर स्पष्ट सुन्दर अक्षरों में लिखकर अथवा टाईप कराकर दो पंक्तियों के बीच में समुचित स्थान के साथ भेजें. किसी भी उद्धरण का पूरा सन्दर्भ अवश्य दें. रचना की वापसी के लिए टिकट लगा लिफाफा भेजना न भूलें. २. किसी पर्व/अवसर विशेष पर सामग्री दो माह पूर्व भेजें. ३. पत्रिका के सदस्य पत्रव्यवहार व धनादेश भेजते समय सदस्य संख्या का उल्लेख अवश्य करें.४.हम साहित्यकारों को फिलहॉल कोई मानदेय नहीं देते. केवल उपहार स्वरूप दो प्रतियॉ ही भेजते हैं जिसमें उनकी रचनाएँ छपी होती हैं. भविष्य में कुछ मानदेय देने की योजना विचाराधीन हैं. लेकिन वह मांगी गयी सामग्री पर ही देय होगी. ५. यदि आप अपनी कृति (काव्य, ग़ज़ल, कहानी, निबंध संग्रह, उपन्यास) का विज्ञापन इस पत्रिका में छपवाना चाहते हैं तो रु० १००/-का मनिआर्डर तथा एक प्रति पुस्तक की भेजें. ६. धनादेश/बैंक ड्राफ्ट/डी.डी 'संपादक, विश्व स्नेह समाज' के नाम से भेजें. चेक स्वीकार्य नहीं होगा. सदस्यों को चाहिए कि अपना डाक पता स्पष्ट सुन्दर अक्षरों में लिखें.

सुप्रसिद्ध कवित्रि, अनुवादक, और सबसे ज्यादा डॉ० राज की अनन्य मित्र **राकेश नंदिनी गुप्ता** जो एक-एक कौर दोनों मिल बॉटक्र खाते हैं-

पहली मुलाकात में मोह लेती हैं 'राज'

राज जी से मेरी प्रथम भेट 'ऋचा' की कार्यकारिणी की एक बैठक के संदर्भ में हुई थी. वे ऋचा महिलाओं की अखिल भारतीय लेखिका संस्था की मुख्यमंत्री थी. आठ दस लेखिकाओं की उस उपस्थिति में राज जी का व्यक्तित्व मुझे कुछ भिन्न सा प्रतीत हुआ. अन्य महिलाओं सा उनमें लेखिका होने का विज्ञापनी हाव भाव का अभाव दिखा.

उनकी मुखाकृति दक्षता भी शिष्टता ग्रहण किये सामान्य बनी हुई थी. उनका मँझोला कद, कुछ विदेशीयता लिये हुए गौरवर्ण तथा चौकोर सी मुखाकृति पर एक 'हेण्डल विथ केयर' का अदृश्य ठप्पा सा लगा हुआ था. वे अपने बारीक अक्षरों में कुछ लिखने में व्यस्त थी और मैनें मन ही मन उनके सिर पर कर्मा शान्ताक्रुंज का ताज लगा लाल टोपा तथा कर्मा 'मदरट्रेसा' की नीली धारी वाली किनारें का ऑचल ओढ़ाकर देखा कि इस प्रकार के व्यक्तित्व के लिए क्या उपयुक्त हो सकता है. अभी निश्चित नहीं कर पाई थी कि, उन्होंने बड़ी नम्रता और मधुरता से मुझ रजिस्टर पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा. वे अत्यन्त मित्तभाषी होते हुए भी उनकी वाणी में मित्रता, सहृदयता व सौम्यता की स्पष्ट झलक मिल जाती है. बहुर्मुखी प्रतिमा के भार से दबी उनकी भारी पलकों के नीचे दबी उनकी सजग मुस्कुराती ऑखों की गंभीरता आत्मियता बहुत कुछ व्यक्त कर जाती है.

ऋचा का महिला वर्ग तो जा चुका था. ऋचा. ऋचा की अध्यक्षा श्रीमती दिनेश नन्दिनी डालमिया जो मेरी बहन भी है-उनसे मैंने तुंरत कहा "आपकी कार्यकारिणी की महिलाओं में से केवल एक ही लेखिका है जिसमें गंभीर नेतृत्व का कौशल दिखता है." उस समय उन्होंने मेरी पारखी दृष्टि का आदर भी किया होगा, कह नहीं सकती.

व्यक्तिगत् रुप से राज जी अत्यन्त स्वाभिमानी स्वालम्बी और संवेदनशील लगती है. वे चाहे घर की रसोई में हो चाहे पॉच सितारों वाले ड्राईगरूम में ही क्यों न हो उनका सजा संवरा व्यक्तित्व सदैव उनके निकट बना रहता है. उनकी स्वच्छता बेजोड़ हे. वे अपने प्रकार की एक ही महिला है. वर्षो जापान जैसे देश में रहने के कारण उस देश के अच्छे संस्कार और आदतें उनके स्वाभाव में सम्मलित हो गई हैं. फिर भी वे एक शुद्ध भारतीय महिला ही बनी रहीं. यदि यों कहां जाये तो भी अतिश्योक्ति पूर्ण नहीं होगा कि उनके व्यक्तित्व में भी जापान के फोटो की चमक न होकर असली बसरा के मुक्ता की आभा है.

इसी बीच मेरी प्रथम पुस्तक 'यवनीका' की पाण्डुलिपि तैयार हो चुकी थी. सवाल यह रह गया था कि इस पुस्तक का आमुख कौन लिखे. मैंने अपनी बहन के सम्मुख राजजी से लिखवाने का प्रस्ताव रखा. अतः पाण्डुलिपि उनके पास भिजवा दी गई. मुझे बहुत प्रसन्नता हुई कि उन्होंने लिखना स्वीकार कर लिया. अभी भी राज जी से मेरा सीधा संपर्क नहीं हो सका था.

कुछ दिनों बाद मेरी कविताओं पर उनके दो शब्द लिखे मुझे मिल गये. मैंने उसे कई बार पढ़ा. अपने लेख में उन्होंने उन्हीं कविताओं पर विशेष ध्यान दिया था जो मुझे भी प्रिय थी. इस प्रकार मुझे भी महिला साहित्यकारों के वातानुकूल वातावरण में प्रतिष्ठत होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ. कुछ लेखिकाओं को मेरी यह चेष्ठा अनाधिकार प्रवेश जैसी भी लगी हो, कह नहीं सकती.

'यवनीका' के लोकार्पण के समय भी राज ने मेरी बहुत सहायता की. उसके बाद लगभग प्रति वर्ष मेरी पुस्तक छप ही जाती. एक दशक के अन्तराल में मेरे छः काव्य संकलन और दो अनुवाद भी निकले. बहुत प्रयत्न करने पर भी मैं अपने विचार और भावनाओं को आज के आधुनिकता में नहीं ढ़ाल सकी. छन्दबद्ध गीत भी लिखती रही. इधर इन वर्षो में हिन्दी कविता के अनेक रुपान्तर हो चुके हैं. शायद पाठक भी कविता पढ़ना अधिक पसन्द नहीं करत. पाठकगण की रुचि भी बदल गई हैं. हिन्दी का शुद्ध स्वरुप आज की कविता में कम ही दिखता है.

राजजी मुझे अपने ही ढंग से प्रोत्साहित करती रहीं. उनके अल्प शब्दों में दुनियाभर की मित्रता भरी होती है. इस बीच उनसे बातचीत करने का सिलसिला भी बढ़ता गया.

व्यक्तिगत् रुप से राज जी अत्यन्त स्वाभिमानी स्वालम्बी और संवेदनशील लगती है. वे चाहे घर की रसोई में हो चाहे पॉच सितारों वाले ड्राईगरूम में ही क्यों न हो उनका सजा संवरा व्यक्तित्व सदैव उनके निकट बना रहता है. उनकी स्वच्छता बेजोड़ हे. वे अपने

प्रकार की एक ही महिला है. वर्षो जापान जैसे देश में रहने के कारण उस देश के अच्छे संस्कार और आदतें उनके स्वाभाव में सम्मलित हो गई हैं. फिर भी वे एक शुद्ध भारतीय महिला ही बनी रहीं. यदि यों कहां जाये तो भी अतिश्योक्ति पूर्ण नहीं होगा कि उनके व्यक्तित्व में भी जापान के फोटो की चमक न होकर असली बसरा के मुक्ता की आभा है.

हाल ही में प्रकाशित राजजी का काव्य संकलन 'सप्तवर्णी मन' की काव्य पक्तियां सचमुच मन को तन्मय कर जाती है. जब पुस्तक का नाम ही इतना सुन्दर है तो कविताओं का तो कहन ही क्या? लगता है उनका बिसाती मन नवीनतम भाव सुमनों को दूर अन्तरिक्ष की शुद्ध चॉदनी में धो-पोछकर सप्तवर्णी के दोनों में सजाकर रखता गया हो. आधुनिक विद्या में ढली ये काव्य पंक्तियां पाठक को चमकृत करती जाती है. कहीं-कहीं ऐसा प्रतीत होता है कि जिस प्रारंभिक पदार्थ से सृष्टि और प्रवृति का सृजन हुआ होगा उसी आदि तत्व से उनके काव्य का स्पर्श हुआ हो. प्रायः अधिकांश पंक्तियों मं कवयित्रि का शिशु आल्हाद अलबत्ता हैं. कहीं-कहीं तो अनकही व्यथा असीम दरिया में रूपान्तरित भी हो जाती है. महादेवी तो 'नीर भरी दुःख की बदली' बन गई थी. परन्तु राज के भीतर 'दर्द का दरिया बहता है.' जिसके किनारे उनका 'चन्दन मन' पेंजनी पहन ठुमक-ठुमक चलत, कभी लोरी और कभी गोदी के लिए मचलता है. इसी भीषण दर्द में भी वे एक नन्हीं बच्ची की भॉति आत्हार का मजा उठाता है. खरगोशी हथेलियों पर भाग्य की लिपि लिखने में तल्लीन हो जाती है. शायद इसी प्रकार की व्यथा ने वाल्मिकी को आदि कवि बनने को विवश किया होगा. उनके दर्द की विभिन्न प्रक्रिया उनको भक्ति की उष्ण धारा में नहला देती है.'

कहीं-कहीं वे अपने जीवन की वास्तविकता और उससे उभरे व्यक्तित्व से पूर्णतः संतुष्ट भी दिखती हैं. उनकी व्यथा को एक नया मोड़, नया आयाम मिल जाता है.

भगवान से भेजी गई प्रत्येक परीक्षा के लिए वे तत्पर तैयार हैं-फिर भी वे भगवान से विनम्र प्रार्थना करती हैं-

इस चन्दन तन को
चन्दन सा
वन्दन मन को
वन्दन सा होने दो।।

जिससे कि 'तन मन की अंजुरी में तुम्हारा अनन्त सागर समाता रहे. तुम्हारी ही देन को सप्रणाम अर्पित करती रहूँ. मेरे प्रभु' उनके मन के राजमहल में वर्षो पहले एक प्यार पगी जनक सुता रहती थी. कंकण में प्रिय का रूप निहार मन्त्र मुग्ध होती. परन्तु वही सीता आधुनिकता के युग में बदल जाती है, "अब तो वह हर तरफ की लक्ष्मण रेखा छलांग स्वर्ण-पुरी तलाशती हैं." समय का पहिया घूमकर वर्तमान में आ जाता है और सब कुछ बदल ही जाता है. वे दोनों सीताओं को तटस्त भाव से देखती हैं. परन्तु यह निश्चय नहीं कर पाती है कि "राम मय बनूं या स्वर्णमय."

"मेला" एक विशेष आकर्षण लिए हुए हैं. पंचतत्वी रथ पर सवार अपना घर द्वार छोड़ बरसों पहले जग का खूबसूरत मेला देखने चली आई थीं फिर वे मेले में ही रह गई-शायद भटकी वे अब भी नहीं हैं. कामयनी की "श्रद्धा" ललित कलाओं को सीखने की याद में धरती पर घूमती चली आयी थी. वहॉ पर उन्होंने शैशव का भोलापन, किशोरी का कौमार्य तथा वृद्धावस्था की असहायता सब कुछ एक साथ व्यक्त कर दी हैं. सब कुछ सत्य रूढ़ि और कल्पनाप्रद हैं.

'जिन्दगी' में उन्होंने किसी क्यारी में पैसे नहीं बोये तो क्या हुआ? उसके रास्ते के कॉटें तो बुहार दिये हैं. "वक्त के परिन्दों ने उम्र के एक-एक दाने चुग लिया है." तो क्या हुआ? उन्होंने अपने स्वयं के कर्त्तव्य का निर्वाह तो भली-भॉति लेकर ही दिया है.

कहीं-कहीं वे सर्वोच्च शिक्षक की भॉति अपने हर युग के युवा विद्यार्थियों में उस समय कृष्ण की खोज करती है. "मोती लेने हैं तो गहरे बैठना होगा." वे विश्वास के साथ कहती हैं. दूसरों की चादर गंदी करने में क्या रखा हैं. हो सके तो अपनी चादर साफ करके चलते रहो फल तो अपने आप ही बिछ जायगें.

"दीपक जला लो आस्था का, जो चाहते हो कब मिल जायेगा." यह उनका अनुभव और विश्वास भी हैं. वर्तमान की असभ्य युवा पीढ़ी से क्षुब्ध होकर वे कान्हा का वास्ता देकर उसे सभ्य बनाने की फिक्र में भी रहती हैं. जब अधिक व्यथित हो जाती है तो मन के अगस्त्य को बुलाकर व्यथा का सागर पान कराकर उसे ऋषि बना देना चाहती हैं. अपने अनामी मित्र को वे यहॉ की 'पंगत' बसाने के लिए निमंत्रित करती है. 'सप्तवर्णी' में कवयित्रि भावपक्ष और शिल्पपक्ष सशक्त होते हुए भी मन की प्रणयभिव्यक्ति का अमाद् दिखता है प्रणयाभिव्यक्ति लौकिक धरातल से ऊपर उठ चुकी हैं. अतः उसमें मिलन को महत्व नहीं मिला हैं. मिलन के प्रणय पक्ष की उसमें चर्चा नहीं दिखती हैं. अतः स्वाभाविकतः विरह और वियोग का हाहाकार भी कहीं सुनाई

शेष पृष्ठ ३८ पर....

ऊर्जा बिखेरते प्रेमीले संस्मरण

✍डॉ0 भगवती प्रसाद निदारिया

जिन खोजा तिन पाइयां गहरे पानी पैठ।
जे बपुरा डूबन डरा रहा किनारे बैठ।।

'गहरे पानी में पैठने' का साहस कर लोग भले ही बहुमूल्य उपलब्धियां हासिल कर लेते हैं, भले ही भौतिकता की दौड़ में आगे बढ़ जाते हैं किंतु वे पीछे काफी कुछ छोड़ भी जाते हैं जबकि जो साहस नहीं जुटा पाते वे मुख्य धारा से अलग उपलब्धियों के बिना ही रह जाते हैं. इसका एक पक्ष और है जो अतिशय निष्ठा, अनन्यता और परिश्रम से जुड़ा हैं. इनके बल पर सफलता को पाया जा सकता है जबकि प्रयासहीनता में असफलता निश्चित हैं. प्रख्यात साहित्यकार राज बुद्धिराजा की पुस्तक 'हाशिये पर' पढकर पता चलता है कि लेखिका इन संस्मरणों में मुख्य धारा से अलग उन पात्रों के प्रति अधिक संवेदित हैं जो 'हाशिये पर हैं. वह उन गहराइयों में नहीं उतरती जो केन्द्रीय अस्तित्व में बाहरी तामझाम और चकाचौध से लैस हैं अपितु हाशिये पर के उपेक्षित, अनमोल पात्र ही इसके आकर्षण का केन्द्र रहे हैं. हाशिये पर में ऐसी ही पात्रों क मानस में उतरकर लेखिका बहुमूल्य भाव-रत्न निकाल लाती हैं. छोटे-छोटे इकसठ सस्मरणों का यह संकलन ताजगी, प्रेरणा और प्रेम के इंद्रधनुषी रंगो के उत्सव के रुप में उपस्थित होता हैं.

प्रख्यात संस्मरणकार राज बुद्धिराजा के अनुसार हाशिये पर के पात्रों की रचना करते समय मेरे जन्म-जन्मांतर के संस्कार मुझ पर हावी रहते हैं. कभी-कभी आपको भी लगेगा कि ये पात्र आज की धरती के हैं, उसमें सांस लेतते, जूझते और राहत पाते हैं.' आज किसे फुर्सत है जो आमजन को समझने-समझाने के लिए समय नष्ट करें. जीवन की रफ्तार इतनी बढ़ने लगी है कि थोड़ा रुककर किसी को जानने, बतियाने और उससे घुल मिल जाने जितना समय भी लोग नहीं निकाल पाते. ऐसे में इन सस्मरणों को पढ़ते हुए पाठक इन पात्रों से संवेदित ही नहीं होता है न ही लेखिका के

भारतीय संस्कृति के प्रति असीम श्रद्धा, लेखिका के हृदय में विद्यमान है. उस संस्कृति में निहित मूल्यों का भौतिकावादी सभ्य समाज कितना अपनाए हुए है, कितना छोड़ता जा रहा है, इन्हीं विश्लेषणपरक स्थितियों को इन संस्मरणों में समेटा गया हैं. इसके साथ ही प्रभु भी लेखिका के साथ एकाकार हैं. प्रभु के साथ अनन्यता ही लेखिका को ऊर्जा का अपरिमित भंडार दिए हुए है जिसे लेखिका अपने पात्रों में पाठकों में अपने भाव-शिल्प के माध्यम से सौपती हैं.

भावाच्छादित शिल्पमंडल में विचरने लगता है अपितु वह खुद को अपनी चेतना से बतियाता महसूस करता है जो कि इन संस्मरणों की शक्ति हैं. ये सस्मरण पाठक को ऊर्जस्वित करते हैं, उसकी सुप्त चेतना को झकझोरते हैं, जाग्रत करते हैं और उसे सप्रेम सौंपते हैं एक सकारात्मक सोच, सकारात्मक दिशा.

भारतीय संस्कृति के प्रति असीम श्रद्धा, लेखिका के हृदय में विद्यमान है. उस संस्कृति में निहित मूल्यों का भौतिकावादी सभ्य समाज कितना अपनाए हुए है, कितना छोड़ता जा रहा है, इन्हीं विश्लेषणपरक स्थितियों को इन संस्मरणों में समेटा गया हैं. इसके साथ ही प्रभु भी लेखिका के साथ एकाकार हैं. प्रभु के साथ अनन्यता ही लेखिका को ऊर्जा का अपरिमित भंडार दिए हुए है जिसे लेखिका अपने पात्रों में पाठकों में अपने भाव-शिल्प के माध्यम से सौपती हैं.

मौन के माध्यम से इन संस्मरणों में जो संवेदना, भाषा का जो अजस प्रवाह, भावनाओं की जा लहरें कभी अश्रुओं के माध्यम से तो कभी परस्पर एक दूसरे को निहारते हुए, कभी हथेलियां पढ़ते, छूते, चूमते हुए मिलता है वह अतुलनीय है. मौन को भाषा की बहुत बड़ी शक्ति के रुप में शब्दों के विपुल भंडार के रुप में लेखिका ने प्रस्तुत किया हैं. मौन को प्रायः हाशिये पर ही रखा जाता रहा हैं किंतु लेखिका ने इसे हर प्रकार के तर्क, विद्वता, ज्ञान और भाषा से अधिक ताकतवर प्रदर्शित किया हैं.

खून के रिश्तों से ही बड़े होते हैं मन के रिश्ते. प्रेम में सराबोर ये रिश्ते जन्म-जन्मांतर तक जुड़े अपनी सुगंध से जीवन को भर देते हैं. इन संस्मरणों में ऐसे अनेक रिश्तों का उल्लेखनीय अंकन हैं. बच्चे, बृद्ध, पक्षी जैसे बहुत से पात्र, स्थितियां संस्मरणकार की चिंताओं, आशीर्वादों और बॉहों में भर लेने का आतुर हैं. देशी-विदेशी मित्र हो, सवारियों को गंतव्य तक पहुंचाने किंतु प्यासों की प्यास बुझाते सरदार जी हो, मरीज हो या ऐसे ही अन्यान्य पात्र हो ये सभी मूल रिश्तों के परे के रिश्ते हैं जो मूल रिश्तों से भी बढ़कर हैं.

लेखिका का व्यक्तित्व भी संस्मरणों में विद्यमान हैं. आत्मकथा के सूत्रों को जोड़ने पर लेखिका के बारे में अनेक

विशेषताओं का पता चलता हैं. लेखिका संयमशील है, मौन की भाषा में प्रेम करती है, सहभावी, आग्रहशील, प्रभु के प्रति कृतज्ञ, प्रकृति प्रेमी, नैतिक मूल्यों के प्रति आस्थावान, बड़ों के प्रति विनम्र छोटो के प्रति आर्शीवाद बिखेरती, मित्रों के प्रति आत्मी दायित्व भारतीय संस्कृति के प्रति निष्ठावान हैं.

सभी संस्मरणो कें अंत में लेखिका चेतना को झकझोरता वाक्य छोड़ देती है. उस वाक्य में आग्रह, प्रभु-कृपा, संवेदित होने का अनुरोध, समालोचना है तो कहीं आदर्श अपनाने का मित्रवत अनुरोध हैं. आमजन जो हाशिये पर जाना समझा जाता है, के जीवन की विलक्षण विशेषताओं को समेटने के लिए शब्द शिल्पी राज बुद्धिराजा ने इतने सरल, हृदयग्राही और मार्मिक शब्दों का प्रयोग किया है जो पाठक पर सीधा असर करता हैं. विसंगतियों और विडंबनाआं की दुनिया में संगति-सार्थकता तलाशती लेखिका की शैली स्वयं में प्रतिदर्श हैं. जो यह खुला करती है कि लेखन का एक यह भी ढ़ंग हो सकता है. ये अप्रतिम संस्मरण उदात्त साच को रेखांकित करते हैं. ऊर्जा बिखरते ये प्रेमिले संस्मरण पाठक के स्मृति पटल पर, मन के किसी कोने में अपना स्थायी निवास बना लेते है जो इनकी अदभुत शक्ति हैं.

++++++++++++++++++++

पहली मुलाकात में पृष्ठ ३६ का शेष्र ......

पड़ता हैं. छायावादी कवियों की भॉति उन्होंने किसी रहस्यापद बिम्ब को भी प्रस्तुत नहीं किया हैं. इसीलिये उनकी काव्य प्रतिमा लौकिक न होकर अलौकिकता के धरातल पर स्वतः ही पहुँच जाती है. उनका सत्य अपने पैरों पर खड़ा रहने में समर्थ है, उसे किसी काल्पनिक बैसाखी की आवश्यकता नहीं पड़ती हैं. 'कविता' के माध्यम से वे उसका शब्द स्पर्श, रूप रस, गन्ध जानने का निवेदन करती हैं. वह

तुम्हारा ही नाम है-
जो मेरे मन के आकाश
बादल सा उमड़ता है।
वह तुम्हारा ही स्पर्श है
जो मेरे गालों को
ताजा गुलाब कर जाता हैं।
'उत्सव' वे करते है
हर दिन
एक उत्सव
उतर आता है
मेरे मन के आंगन।

प्रतिदिन वे उत्सव में इतने तृप्त हैं वे किसी अन्य अलौकिकता की खोज में अपने कल्पना को दौड़ान उचित नहीं समझती हैं. जो उन्हें सहज ही समझ में आ रहा हैं. उसके लिए रहस्यात्मक उहापोह में पड़ने की आवश्यकता ही क्या हैं?

यदि तुम आ जाते तो
सब कुछ ठीक था
बज उठती शहनाई
मन के आंगन में
नख शिरद श्रृंगार भी
हो जाता-नहीं आने पर

उनके मन में कोई शिकायत शिकवा भी नहीं हैं. यह उनके काव्य की युवावस्था कहीं जा सकती हैं.

++++++++++++++++++++

स्नेहांगन कला केन्द्र

एल.आई.जी–93, नीम सरॉय कॉलोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद, मो0 09335155949

हमारे संस्थान से निम्न हॉबी कोर्स व डिप्लोमा कोर्स चलाये जाते हैं. कोर्स पूरा होने पर प्रमाण–पत्र भी दिया जाता है।

1.सिलाई 2.रेशम की कढ़ाई 3.मशीन की कढ़ाई 4.सिंधी कढ़ाई 5.जरदोजी की कढ़ाई 6. जरी की कढ़ाई 7.पॉट डेकोरेशन(12 प्रकार के) 8.आइस्क्रीम 9.बेकिंग (केक,बिस्किट बनाना) 10.कुकिंग 11.इंग्लिश स्पीकिंग कोर्स 12.कम्प्यूटर कोर्स 13.पेंटिग(सभी प्रकार की) 14. ब्लॉक प्रिटींग 15.स्क्रीन पेंटिग 16.पैचवर्क 17.मुकैश 18.रंगोली 19.टाई एण्ड डाई 20.बाटिक 21.स्पंज, स्प्रे प्रयोग 22.फ्लॉवर मेकिंग 23.ब्यूटीशियन 24.बरगद का पेड़

विशेषः1. एक साथ 5 प्रवेश पर 10प्रतिशत की छूट

2. समयः सायं 3 बजे से

3. शनिवार अवकाश 4.शाखा खोलने हेतू भी सम्पर्क करें

माता जी के स्नेह से स्नेहिल कौन नहीं हो सकता

साहित्य श्री सम्मान के लिए आपके द्वारा भेजी गयी प्रविष्टि के माध्यम से मेरा पत्र परिचय हुआ. आपकी एक साथ करीब दस पुस्तकें, जिसमें उपन्यास, कहानिया, संस्मरण, कविता संग्रह शामिल थे, प्राप्त हुई. मैं संयोग से उन्हें पलटने लगा तो आपकी भाषा शैली व विचारों ने मुझे पत्र-व्यवहार करने पर मजबूर कर दिया. पता नहीं क्यों मेरे मन में यह विचार आया कि अबकी साहित्य श्री सम्मान ये ले गयी. खैर वही हुआ भी निर्णायक मंडल ने आपको ही चुना. आपसे मेरी प्रथम मुलाकात २००४ में परियांवा प्रतापगढ़ में हुई. साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कला अकादमी, परियांवा प्रतापगढ़ में ने मुझे सम्मानित करने का निर्णय लिया था. मैं कार्यक्रम सम्मान लेने गया हुआ था. सामने एक सुसभ्य, सौम्य, चेहरे पर प्रखर तेज लिए हुए एक महिला बैठी नजर आयी. मेरे दिमाग में कुछ हलचल हुई. इस तरह का तो कोई फोटो मैंने कहीं देखा हैं. खैर थोड़ी मशक्कत के बाद मेरे दिमाग ने यह स्पष्ट कर दिया कि ये डॉ. राज बुद्धिराजा ही हैं. मैं उनसे रुबरु होने को बेताब था. लेकिन कार्यक्रम में उनके मंच पर बैठे होने के कारण यह सम्भव नहीं हो पा रहा था. खैर इंतजार की घड़ियॉ विराम ली, कार्यक्रम के प्रथम सत्र का सत्रावसान हुआ. मैं उनके पास गया. शिष्टाचार के बाद मैंने अपना परिचय दिया. मित्तभाषी होने का उन्होंने भरपूर परिचय दिया. उन्होंने बस इतना ही कहा "अच्छा तो आप ही गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी जी है. आपका बहुत नाम सुना था. आज मुलाकात हो गयी. आप हिंदी के लिए बहुत बढ़िया काम कर रहे हैं." मैने कहा यह सब तो आप जैसे साहित्यकारों का आशीर्वाद हैं. इसके बाद एक दो बार आपसे दूरभाषिक वार्ता मोबाइल महाराज की मेहरबानी से हुई. ३० मई २००४ को आप विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान के कार्यक्रम में इलाहाबाद पधारी. लेकिन मुझे कार्यक्रम के संयोजक होने के कारण व्यस्तता और आपके व्यस्त समय सारिणी के कारण कोई खास वार्तालाप नहीं हो सका. कार्यक्रम में पधारने के लिए मैंने आपको धन्यवाद पत्र भेजा तो आपने मेरे मोबाइल महाराज को फिर याद किया. आपके मन में साहित्य मेला कार्यक्रम को लेकर किसी सम्माननीय भद्र पुरुष द्वारा दिया गया कुछ वाक्य कचोटे बैठा था. मैने आपकी आशंकाओं का निवारण किया. मोबाइल महाराज की यह कृपा हम दोनों के बीच एक मील का पत्थर साबित हुई. मैने शीघ्र ही आपको विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान का संरक्षक पद ग्रहण करने का आग्रह पत्र प्रेषित किया. आपने अपनी स्वीकृति दे दी और इलाहाबाद आने पर विस्तृत वार्ता करने को कहा. इस बीच अक्सर मोबाइल महाराज की कृपा से वार्ता होती रही. आप हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कार्यक्रम में सम्मान लेने के लिए पधारी तो इलाहाबाद के होटल कान्हा श्याम में हमारी आपकी नजरों के सामने-सामने लम्बी वार्ता हुई. यह वार्ता लगभग तीन घटें चली. कॉफी व नाश्ते के दौर के बीच मैने व डॉ० राज जी ने एक दूसरे को जाना. विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान को लेकर भी वार्ता हुई. आप उसी दिन दिल्ली वापस चली गई. डाक विभाग व मोबाइल महाराज की कृपा १५-२०वें दिन होती रही. इस बीच आप मार्च २००६ में

✍गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी

पुनः इलाहाबाद में साहित्य सम्मेलन के महादेवी वर्मा जी जन्म शताब्दी के अवसर पर आयोजित कार्यक्रम में भाग लेने पधारी तो पुनः लम्बी वार्ता हुई. पहले दिन करीब चार घंटे वार्ता हुई. आपने मुझे स्नेह दिया उसे मैं कैसे भुला सकता हूँ. आपने इस वार्ता में अपने बारे में काफी कुछ बताया. अगले प्रेस वार्ता का कार्यक्रम मैंने विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान की तरफ से संस्थान के बारे में व आपके बारे में जानकारी देने के लिए आयोजित की. प्रेस वार्ता उम्मीद से अधिक सफल रही. स्थानीय चैनल व समाचार पत्रों ने अच्छी जगह दी. इस प्रेस वार्ता ने संस्थान को एक अच्छी पहचान दी. रात्रि में जब मैं आपको रेलवे स्टेशन पर छोड़ने गया तो आपने कहा-"गोकुलेश्वर जी मैं आपसे व आपके कुशल प्रबंधन से बहुत प्रभावित हुई हूँ. मेरे लायक कोई भी सेवा हो तो बेझिझक बताइएगा."

सबसे बड़ी बात यह रही कि आपके व हमारे बीच उम्र, अनुभव, कद, लेखनी लगभग सभी क्षेत्रों में लम्बी दूरी होने के बावजूद आपने हमेशा मुझे गोकुलेश्वर जी कहकर ही पुकारा. मोबाइल वार्ता में भी मुझसे पहले ही नमस्कार हमेशा बोलती रही हैं. आपने मुझसे इस बीच दिल्ली आने को कई बार कहा मगर दुर्भाग्यवश मैं विभिन्न कारणों से नहीं जा सका. एक तो पत्रिका, विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान, पत्रकार संघ, समाज सेवा, पारिवारिक जीवन, इन सबने मुझे कई बार अंत समय में रोक दिया. खैर सितम्बर २००६ में मेरी दिल्ली की योजना बनीं. मैनें

आरक्षण कराने के बाद ही आपको आने के बारे में बताया. क्योंकि कई बार मैं कहकर भी नहीं जा सका था. मैंने आपको बताया कि २६ सितम्बर को मेरा प्रयागराज से आने व १ अक्टूबर को लौटने का आरक्षण हैं. २६ तारीख की शाम मैंने आपको बोगी नंबर आदि की जानकारी आपके आदेश पर दिया. आपने मुझसे कहा मैं स्टेशन पर आपको लेने कार से आऊँगी. मैंने कहा-'ठीक है'. लेकिन दिल्ली बहुत दूर है वाली कहावत पुनः चरितार्थ होने को आ गई. मैं जिस टैक्सी से अपने घर से रेलवे स्टेशन के लिए एक घंटा पूर्व निकला उसने मात्र २०-३० मिनट की दूरी को एक घंटे में तब्दील कर दिया. प्रयागराज मेरी ऑखों के सामने से प्लेट फार्म पर पहुँचने के पूर्व ही प्रस्थान कर चुकी थी. अब मैने सोचा लो हो गई दिल्ली की यात्रा. लेकिन मैने दृढ़ निश्चय किया चाहें जो भी आज दिल्ली जाऊँगा. तभी पूछने पर मालुम हुआ कि दिल्ली के लिए स्पेशल ट्रेन प्लेट फार्म नम्बर दो पर नंबर लगी हुई है, जो शीघ्र ही छूटने वाली हैं. मैने तुरंत लगभग दौड़ कर साधारण बोगी में स्थान लिया. ट्रेन में आराम से लेटने भर को जगह मिल गई. सुपर फास्ट ट्रेन भी थी सो अच्छी चली. मैं सोचा चलों शायद कानपुर में प्रयागराज के दीदार हो जाए. लेकिन वहॉ भी दौड़ने के बावजूद लगभग पॉच मीटर के अंतराल से ऑखों के सामने से ओझल हो गई. पुनः आकर उसी ट्रेन में बैठा. लेकिन वह ट्रेन वहॉ से आगे बढ़ने को नाम हीं नहीं ले रही थी. मैंने वहॉ खड़ी एक दूसरी ट्रेन पकड़ी जिसमें बहुत मुश्किल से बैठने को जगह नसीब हुई. लेकिन वह एक्सप्रेस ट्रेन तो सवारी गाड़ी से भी बदत्तर निकली. जहॉ देखों वहीं रुक जाती. जहॉ रुकती वहॉ से हिलने का जल्दी नाम नहीं लेती. मैनें अब ट्रेन नहीं बदलने का निर्णय लिया. लेकिन मेरी नादानी कहिए या .... मै डॉ० राजबुद्धिराजा मैडम को इसकी जानकारी नहीं दे सका. सुबह ५:३० पर आपने मेरे मोबाइल महाराज को याद किया. आप अभी कहॉ पहुँचे है. मैने बताया कि मैं अभी टुंडला में हूँ. मैं जिस ट्रेन पर सवार हुआ था उसका दिल्ली पहुँचने का समय ७:३० बजे था मैंने आपको बताया कि ८ बजे के लगभग दिल्ली पहुँच जाऊंगा लेकिन अपनी राम कहॉनी मोबाइल महाराज के अवरुद्ध व्यवहार के कारण नहीं बता सका. मैडम प्रयागराज ट्रेन का पूछताछ से समय पता कर स्टेशन पहुँच गयी. इस बीच आपने और मैने भी कई बार मोबाइल महाराज की कृपा चाही मगर मोबाइल महाराज कृपा करने को तैयार ही नहीं हो रहे थे. आप उधर स्टेशन पर परेशान होकर मुझे ढूढ रही थी इधर मैं मन ही मन बेचैन की. आप क्या सोच रही होगी. मुझे इलाहाबाद से ही पूरी स्थिति बता देनी चाहिए थी. खैर ८:३० पर गाजियाबाद में ट्रेन रुकने पर मोबाइल महाराज ने अपनी कृपा दिखायी. अभी मैं नंबर मिलाने ही वाला था कि आपका फोन आ गया. तब मैंने आपको पूरी स्थिति से संक्षिप्त रुप में वाकिफ कराया. आपकी बातों से मुझे लगा कि आप कुछ क्रोधित हुई हैं. लेकिन आपने बस इतना ही कहा कि 'आपको कम से कम मेरी उम्र का तो लिहाज करना चाहिए था मैं कबसे परेशान हूँ कि प्रयागराज तो आ गई लेकिन आप कहॉ हो. मैं इस प्लेट फार्म से उस प्लेट फार्म पर चक्कर काट रही हूँ. इसी बीच मोबाइल महाराज ने पुनः साथ छोड़ दिया. खैर ट्रेन लगभग रेंगते हुए गाजियाबाद से नई दिल्ली १०:३० पहुँचायी. आपका स्नेह कहें या बड़प्पन आप मेरी प्रतीक्षा करती हुई स्टेशन पर मिली. शिष्टाचार के बाद मैने आपसे अपनी नादानी के लिए क्षमा मांगी. आपने कहा-'कोई बात नहीं. थोड़ा शेडयूल डिस्टर्व हो जाता हैं.' आपने तो इतना कह कर टाल दिया लेकिन मैं अंदर ही अंदर शर्म से पानी-पानी था. आपकी बातों को सुन तो रहा था मगर मैं अंदर ही अंदर अपनी गलती के लिए आत्ममंथन कर रहा था. आपके प्रीत बिहार स्थित घर पहुँचने पर मुझे कहीं से यह नहीं लगा कि आप मुझसे नाराज भी हैं. उस समय मुझे अपनी मां की याद आ रही थी. कैसे जब मैं छोटा था और छुट्टी में हास्टल से घर जाता, कभी-कभी घर पहुँचते-पहुँचते रात हो जाती तो कहतीं -"थोड़ा पहले नहीं चल सकते थे. रात को चलते हो. जमाना खराब हैं. सुबह से भूखे होगें. जल्दी से हाथ मुंह धो लो मैं खाना निकाल रही हूँ." शुरु में ऊपर से थोड़ा गुस्सा दिखाती, मगर बाद में कुछ नहीं कहती. वैसी ही घटना वहॉ भी हुई. उन्होंने कहा-"जल्दी से फ्रेश हो लीजिए, मैं खाना निकालती हूँ. थक भी गये होगें" भोजन करने के बाद लगभग आधा घंटा मैं लेटा रहा मगर न तो नींद आ रही थी और न कुछ पढ़ने को मन कर रहा था. तभी से मैंने आपको माताजी कहने का निर्णय ले लिया.

कुछ देर बाद आप आयी. फिर हम दोनों लोग वहीं बैठकर वार्ता करने लगे. मैनें अपनी पूर्व योजना के बारे में बताया कि मैं अगले वर्ष आपके ७०वें जन्मदिवस के अवसर पर एक विश्व स्नेह समाज में एक विशेषांक निकालने की सोच रहा हूँ. इस मुद्दे पर कौन-कौन लोग आपके बारे में

लिख सकते हैं. उनके नाम पते, फोन नंबर हमें दे दीजिए. पत्र लिखने व सामग्री आने में काफी समय लग जाता हैं. इस मुद्दे पर वार्ता करते-करते शाम हो गयी. आपने अपने हाथों से चाय बनाया. हम दोनों ने चाय पिया. वार्ता में साहित्य मेला को भी १६ मार्च को ही आपके जन्म दिवस के अवसर पर ही आयोजित करने व इलाहाबाद में ही कार्यक्रम करने का निर्णय लिया गया. रात्रिकालीन भोजन हम लोगों को आपके भाई, के घर पर करना था. ठीक ७ बजे वहॉ से कार लेकर ड्राइवर आ गया. शीघ्र ही हमने कपड़े बदले और चल दिए. मुझे वहॉ आपके भाई, भाभीजी, भतीजे, उनकी बहू, बच्चों का व्यवहार अपने प्रति देखकर कहीं से भी यह आभास नहीं हुआ कि मैं किसी अजनबी लोगों के बीच आया हूँ या पहली बार यहॉ इन लोगो से मिला हूँ. आपने सबसे मेरा परिचय कराया और बताया कि मैं एक मासिक पत्रिका 'विश्व स्नेह समाज का संपादक हूँ और मेरे ७०वें जन्म दिवस पर एक विशेषांक निकालने की योजना बनाये हैं. हंसी-मजाक के माहौल के बीच कब रात के १०:३० बज गये पता हीं नहीं चला. मुझे निद्रा देवी अपने आगोश में लेने को भली-भॉति बेकरार थी, लेकिन माहौल ऐसा था कि वे चाहकर भी अपने लिए जगह नहीं बना पा रही थी. डॉ० राज मैडम जिन्हें मैने माताजी कहने का निर्णय पहले ही ले चुका था, ने ही कहॉ अच्छा हम लोग चलते है द्विवेदी जी भी थके होगें और हम लोगों को सुबह ६बजे रोहतक भी जाना हैं. मैं माताजी के भाई साहब को आपके बारे में लिखने को कहकर विशेषांक की नींव भी चलते-चलते रख दी. वहॉ से ड्राइवर हम लोगों को कार से छोड़ गया. लेकिन अब निद्रा देवी एक पल को भी रुकने को तैयार न थी. खैर माताजी ने मुझे मेरा सोने का कमरा मय मच्छर महाराज से सुरक्षा व गर्मी महाराज से बचाव शीघ्र ही कर दी.मैं बिस्तर पर बैठते ही लुढक गया. सुबह खट-पट की आवाज का आभास हुआ तब थोड़ी सी शरीर में हलचल हुई. लेकिन मैं उठने को तैयार न था. लेकिन ठीक साढ़े पांच बजे मेरे सोने के कमरे के फोन ने अपनी करकश आवाज से मुझे उठकर बैठने को मजबूर कर दिया. माताजी आयी वह फोन कार को शीघ्र ही हम लोगों को लेने के लिए पहुॅचने के लिए था. माताजी ने मुझसे पूछा-"गोकुलेश्वर जी सोनें में कोई दिक्कत तो नही हुई. नींद ठीक से आई की नहीं." मैने कहा-मैडम नींद तो अभी खुली हैं. फिर माताजी ने कहा-"जल्दी से तैयार हो जाइए कार आने वाली हैं आप फ्रेश होइए मैं तब तक चाय बनाती हूँ. " मैं शीघ्र ही फ्रेश होने चला गया. ठीक छः बजे कार आ गई. हम लोग शीघ्र यात्रा प्रारम्भ कर दिए. हम लोगों को १० बजे के पहले-पहले भिवानी पहुॅचना था एक गोष्ठी में भाग लेने के लिए. रास्तें में माताजी अपनी विदेश यात्रा के बारे में काफी कुछ बताया. वार्ता में यह भी मालुम चला कि आप एक बहुत अच्छी हस्तरेखा विशेषज्ञ व ज्योतिषि भी हैं. आपने बताया कि टोक्यों में हिन्दी पढ़ाते समय अपने एक छात्र तागा जी को मैंने कहा था आप एक दिन जरुर राजदूत बनेंगे. आज वो पाकिस्तान में जापान के राजदूत है और मुझे बहुत ही अधिक सम्मान देते है. दिल्ली से भिवानी का इतना लम्बा सफर जिसे मैंने अपने उत्तर प्रदेश की सड़कों से तुलना करके सात-आठ घंटे की उबाऊ जर्नी मानकर चला था वह जर्नी बहुत ही आनंददायक रही. माताजी के कुछ रोचक संस्मरणों ने मुझे यह आभास ही नहीं होने दिया कि कब साढ़े तीन घंटे व्यतीत हो गये. वहॉ की सड़के इतनी अच्छी कि गाड़ी का स्पीडोमीटर १००-१२० से नीचे जल्दी आने को तैयार हीं नहीं था. वो तो बीच-बीच में माताजी ड्राइवर महोदय को सुई नीचे करने को मजबूर कर दे रही थी वरना ड्राइवर महोदय...... इसमें गलती उनकी भी नहीं थी क्योंकि सड़के ही वैसी थी. मैं वैसी सड़क पर अपना स्कूटर ८० से नीचे न चलाऊ. ठीक १०:३० बजे हम लोग भिवानी पहुॅच गए. कार्यक्रम अभी शुरु ही होने वाला था. वहॉ भी मुझे माताजी के बदौलत की आशा से काफी अधिक सम्मान मिला. वहॉ श्वेताम्बर जैन आचार्य महाप्राण जी जन्म दिवस के अवसर पर एक मास का विशेष कार्यक्रम चल रहा था. उसी कार्यक्रम के एक हिस्सें के तौर पर आयोजित "स्तम्भ लेखक व सामाजिक समस्याओं के प्रति उनकी भूमिका" विषय पर आयोजित विचार गोष्ठी में हम लोगों को आमंत्रित किया गया था. वहॉ नाश्ते के बाद द्विसत्रीय विचार गोष्ठी में देश के ख्यातिलब्ध साहित्यकारों, संपादको, पत्रकारों से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ. जिसमें कादम्बिनी, जनसत्ता, हरिभूमि, अमर ऊजाला, दैनिक जागरण सहित सुप्रसिद्ध समाचार पत्रों व पत्रिकाओं के लोग थें. सायंकाल चार बजे लौटते समय भी माताजी के संस्मरणों का दौर प्रारम्भ हुआ तो एक चाय ब्रेक के अलावा प्रीत विहार कब पहुॅच गए पता हीं नही चला. ८ बजे लौटने पर मैं शीघ्र ही शयनकक्ष में चला गया तो सुबह ८ बजे ही निद्रा देवी के आगोश से बाहर आ पाया. उठने पर माताजी ने बताया कि मैं कई बार चाय के लिए दरवाजे को कष्ट पहुॅचा

चुकी हैं. फ्रेश होने के बाद करीब ६ बजे हम लोग पुनः बैठे तो मैं वहीं से कई विद्वानों को माताजी के विशेषांक के बारे में लिखने को कहा. आपके परिचितों के पते व फोन नंबर लिए. इस बीच चाय का दौड़ चलता रहा. दो बजे हम लोगों ने लंच किया. पुनः बैठे आपकी किताबें, छायाचित्र भी देखें. विशेषांक से संबधित जानकारी लेकर मैं लौटने की तैयारी शुरु कर दिया. मुझे अपनी दिल्ली आने की घटना समय से बहुत पहले चलने को बार-बार मजबूर कर रही थी. खैर मैं समय से पूर्व माताजी की कृपा से पहुँच गया. आपने प्रीत बिहार से चलने के पूर्व मेरे लिए खाना बनाया. चलते समय आपने कहा आपको मेरे यहॉ कोई कष्ट तो नहीं हुआ. आपके साथ यह तीन दिन मुझे बहुत अच्छे लगें. मैंने कहा-'कष्ट की बात छोड़िए. इस यात्रा में आपके द्वारा दिए गए ममत्व को मैं कैसे भुला सकता हूँ.

मैं इलाहाबाद आकर माताजी विशेषांक के लिए तैयारी हेतु चिट्ठी भेजनी प्रारम्भ कर दी. इस बीच आपसे मोबाइल महाराज की कृपा से संपर्क होता रहा. आपके आदेश पर मैं पुनः जनवरी ०७ में आपके घर तीन दिन की यात्रा पर गया. इस बार की यात्रा और ही अच्छी रहीं. मैं आपके साथ मीडिया इंटरनेशनल सेंटर गया. जहॉ मेरी मुलाकात आपने पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त जे.बी.जी कृष्णमूर्ति, पूर्व दिल्ली मुख्यमंत्री मदन लाल खुराना, पूर्व राज्यपाल जगमोहन सहित कई हस्तियों से कराई. बड़ा ही अच्छा लगा. अबकी यात्रा में मैं कहीं बाहर तो नहीं गया मगर नई दिल्ली में ही कई हस्तियों से मिलने में, कार्यक्रम साहित्य मेला०७ की तैयारी की रुपरेखा में व्यतीत किया.

इन दोनों यात्राओं के दौरान देखा कि कैसे अपने जीवन के ७०वें वर्ष की दहलीज पर खड़ी माताजी, जापान के सम्राट से वहॉ १३० वर्षो के इतिहास में १८वीं वहॉ के सर्वोच्च सम्मान से सम्मानित भद्र महिला, जिसे देश के कई शिखर सम्मानों से विभिन्न संस्थानों द्वारा नवाजा चुका है, जिसने आम छात्रों की तो बात ही छोड़िए विभिन्न देशों के राजनयिकों को भी पढ़ाया है, जो दुनिया के बीसियों देश की यात्राएं कर चुकी है, दैनिक जागरण व जनसत्ता जैसे सुप्रसिद्ध समाचार पत्रों की स्तमभकार है, जिनसे मिलने को उनके छात्र, मित्र विदेशों से हजारो रुपये खर्च आते है वह महिला मुझ छोटे संपादक को, जो आपसे हर मामले में बहुत ही छोटा है इतना सम्मान दे रही हैं. जो एक आम भारतीय लोगों में अंगुली पर गिनती के लोगों में भी देखने व महसूस करने को नहीं मिलता हैं. यहॉ तो थोड़ा सा सम्मान क्या मिला, कोई ओहदा क्या मिला, छोटी सी सफलता क्या मिली वो आसमान पर उड़ने लगते है. लेकिन माताजी के अंदर अहं का तो नामोनिशान तक नहीं हैं. विचार में सौम्यता, खुद खाना बनाकर बड़े ही प्रेम से खिलाना, आगन्तुक की सुविधा का पुरा ध्यान रखना, अपने सारे कार्यक्रम को रद्द कर आगन्तुक के लिए भरपूर समय देना आज के इस आपा-धापी के जीवन में किसे मंजूर हैं. आज तो लोगों को अपने सगे संबंधियों के लिए समय निकालने में कष्ट होता हैं. आपके स्नेह से कोई भी स्नेहिल हुए बिना नहीं रह सकता. एक घटना और याद आती हैं जब माताजी से विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान के द्वारा दिए जाने वाले सम्मानों के लिए मैंने कहा-मैं सोच रहा हूँ इस वर्ष से पॉच हजार रुपये एक साहित्यकार को न देकर कई साहित्यकारो में बांट दूँ' तो आपका साहित्यकारों, लेखको के सम्मान के प्रति स्नेह देखिए. आपने कहा-'नहीं, गोकुलेश्वर जी, अगर आर्थिक समस्या न हो तो रचनाओं व पुस्तकों पर नहीं बल्कि एक रचना पर आप एक ही आदमी को पॉच या दस हजार रुपये दीजिए. एक लेखक को रचना तैयार करने में कितनी मशसक्त करनी पड़ती है ऐ तो आप स्वयं लेखक है जानते ही होगें. साहित्यकारों की अपनी गरिमा खुद बनाकर रखनी चाहिए. कभी किसी के सामने अपनी रचना छापने या पुरस्कार के लिए गिड़गिड़ाना नहीं चाहिए. अगर आप व्यवस्था न कर सकें तो मुझसे कहिएगा मैं प्रयास करुंगी.' साहित्यकारों को लेकर माता जी अंदर कितना प्रेम है. उक्त बातों से आप स्वयं समझ गए होगें.

आपके मृदुल, गंगा समान स्वच्छ मन, सदआचरण, को देखकर मुझे तो ऐसा लगता है कि ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं होगा जो आपसे मिलकर आपका मुरीद न बन जाए. भारतीय संस्कृति का सूत्र वाक्य 'अतिथि देवो भवः' को पूर्ण रुपेण चरितार्थ करने वाली माताजी चाहे कितनी भी थकी हुई क्यों न हो, किसी समस्या से चिन्ताग्रस्त क्यों न हो, आपके चेहरे पर थकान का आगाज नहीं मालुम होगा. आपके व्यवहार से मुझे ऐसा नहीं लगता कि आपको कभी किसी के ऊपर गुस्सा भी आया होगा. अगर आप किसी के ऊपर गुस्सा कभी की होगी तो वह भी मुस्कराकर ही की होगी और शायद अगले को माताजी के क्रोध में होने का भान भी नहीं हो पाया होगा. ऐसी माताजी को मैं अपनी संस्था के सरंक्षक के रुप में पाकर अपने को व संस्था का भाग्य ही समझता हूँ.

युवा स्तम्भकार **शशि तिवारी** डॉ० राज को मांजी कहती है और प्रणाम के बाद उनसे आशीर्वाद की हकदार बन जाती हैं.

ऐसी है राज बुद्धिराजा

डॉ० राज बुद्धिराजा, भारत-जापान संबंध की सेतु हैं. वह भारतीय परंपरा, साहित्य व संस्कृति से जितनी गहरी जुड़ी हुई है, उतनी ही जापान की परंपरा, साहित्य व संस्कृति से भी जुड़ी हुई हैं. उनके घर की साज-सज्जा हो या उनकी कृतियां या उनका व्यक्तित्व भारत-जापान की संस्कृति की झलक बरबस ही मिल जाती हैं. जापान सम्राट द्वारा सम्मानित डॉ० राज के विचारों से अवगत होने के लिए प्रस्तुत है, यह बातचीत-

शुरुआत बचपन की मधुर-स्मृति से करते हुए वह बताती है कि मेरा जन्म जमींदार परिवार में हुआ. घर में दौलत की कमी नहीं थी. लाहौर के अनारकली बाजार में हमारा घर था. वह इमारत आज भी ज्यों की त्यों है. दादी के पास रहती थीं. दादी ने बताया कि मेरे ग्रह-नक्षत्र कुछ ऐसे थे जिनके कारण मैं अपने माता-पिता से दूर रही. मेरी दादी ने ही स्कूल में मेरा दाखिला करवाया था. तब मेरी कोशिश होती थी कि मुझे सौ में सौ अंक मिलें. स्कूली पढ़ाई, चौथी जमात तक चली. विभाजन के बाद, पढ़ाई-लिखाई कर पाना मुश्किल हो गया था. मैं मूंगफली और चनाचूर के लिफाफे जोड़-जोड़ कर पढ़ती थी. दरअसल, मेरे लिए घर की सीढ़ियां ही विद्यालय बन गई थी.

डॉ० बुद्धिराजा अपनी दादी मां के व्यक्तित्व से काफी प्रभावित थी. इस संदर्भ में वह कहती है कि दादी की हवेली बहुत बड़ी थी. वही उसकी मालकिन थी. शायद, कहीं मेरे 'सबकॉन्शस माइंड' में, मेरे मन में कुछ ऐसा ही बैठ गया था कि मैं जिस हाल में रहूँगी मालकिन बन कर रहूँगी. इसलिए, आजतक चाहे कोई भी क्षेत्र हो, मैंने गुलामी नहीं की. दूसरी बात, हमारी हवेली के पास रेत के टीले थे. वहाँ जब बूंदाबांदी होती तब मैं बालू का घरौंदा बनाती थी. शायद, उस समय की इसी सोच ने मुझे तिमंजिला घर बनाने की प्रेरणा दी होगी. तीसरी बात, मेरी दादी पराठे बनाती थी. उस पर मक्खन लगाकर देती थी पर मैं खाती नहीं थी. सहेलियों और चिड़ियों को खिला देती थी. बचपन में अन्न का निरादर किया. इसलिए, अन्न प्राप्त करने और पैसे कमाने के लिए मुझे बहुत मशक्कत करनी पड़ी. मुझ पर इन तीन बातों का बड़ा प्रभाव हैं.

शादी के बंधन, पारिवारिक दायित्व और कैरियर को साथ लेकर चलना, एक औरत के लिए, कई मोर्चे को संभालने जैसा हैं. संघर्ष का वह दौर अग्नि परीक्षा की घड़ी होती हैं. कुछ ऐसा ही, उनके साथ भी घटित हुआ. बातचीत करते हुए, सामने की दीवार पर टंगी श्रीयंत्र को निहारते हुए डॉ० बुद्धिराजा बताती है कि सत्रह साल की उम्र में शादी हुई. मेरा नया घर ससुराल मेरे लिए बहुत छोटा सा कुँआ था. मेरे मन में प्रबल इच्छा पलती ही कि मुझे बहुत काम करना हैं. मुझे अपना रास्ता खोजने में चौदह वर्ष लगें. उस राह में कई तरह के कांटे थें. सब कुछ भूलकर अपने ध्येय पर चल पड़ी. एक ही संकल्प था कि मुझे तैरने के लिए बड़ा सागर चाहिए. मैं तैरने में कभी हिचकिचाई नहीं. नहीं तो बड़ी मछलियां मुझे खा जाती.

कठिन परिस्थितियों में भी मां की चौखट की ओर नहीं देखी. मैं किसी की पत्नी थी तो बच्चों की मां भी. बच्चों को भी नंबर वन बनाने का सपना था. उधर मां और घरवालों की बंदिशे थीं. उनका कहना था कि अब पढ़ाई-वढ़ाई क्या करना? मैं पढ़ने की इतनी शौकिन थी कि कबाड़ी वालों से किताबें खरीदतीं, खाना बनाते हुए, अंग्रेजी की स्पेलिंग याद करती. मेरा कोई गॉड फादर नहीं था. 'मन के हारे हार है, मन के जीते जीत' यह बिल्कुल सच है. सो मुझे लगा कि मुझे खुद ही हर स्थिति पर काबू पाना हैं. विरोध, मायके-ससुराल दोनों तरफ से था. उनका मुख्य मुद्दा था-दुनिया क्या कहेगी? मेरे घर में उस समय ३५ लोग रहा करते थे. सबके लिए खाना बनाना होता था, जो कष्टप्रद कार्य था. व्यक्ति परिस्थितियों से अपने आप उबरता है. समझौता करके आदमी जी नहीं सकता.

सन् १९६२ में, मैने 'नवभारत-टाइम्स' में लिखना शुरु किया. जब अक्षय कुमार जैन उसके संपादक थे. जैन जी से मिली तो उन्होनें अपने प्रतिष्ठित पत्र में न केवल उसे प्रकाशित किया, बल्कि मुझसे और भी लिखने के लिए कहा. मैं वर्षो तक उस पत्र के लिए स्तम्भ लेखन करती रही. यदि उस समय 'नवभारत-टाइम' नहीं होता तो शायद मेरा यह स्तम्भ नहीं होता और यदि यह होता तो शायद मेरा गंतव्य नहीं होता.

जैसे-तैसे एम.ए. कर चुकने क बाद मुझमें नैाकरी करने की भावना तीव्रतम होती गई, क्योंकि रेडियों और समाचार पत्रों ने मुझे जमीन दी थी, वह पैर

जमाने के लिए मेरे लिए काफी नहीं थी और नौकरी के लिए मेरी तथाकथित योग्यता अधूरी थी.

वह आगे कहती है कि मैं कभी किसी से कुछ कहती नहीं हूँ. खुद फैसले लेकर काम शुरु करती हूँ. यह एक अजीब संयोग है कि जहॉ सैकड़ों अर्जियां देने के बाद भी मुझे एक भी नौकरी नहीं मिली और गुरुजनों के आर्शीवाद से मुझे एक साथ चार स्थानों पर नौकरी मिली. अपने स्वभाव के अनुरुप मैनें घर में बिना बताए दौलतराम कॉलेज में नौकरी शुरु की. उस समय मैंने आधा किलो बर्फी खरीदी और घर के लोगों ने जब उसे गुस्से से धरती पर बिखेर दिया तो उस समय मैनं निश्चय किया कि अब यहॉ (ससुराल) में नहीं रहूँगी. मैने चुपचाप बिखरी बर्फियों को उठाया और चिड़िया, कबूतर, गिलहरी जैसे मूक मित्रों को खिला दी. घर के लोग यह समझते थे कि नौकरी कर मैंने घर की इज्जत धूल में मिला दी है और मै समझती थी कि इस मिट्टी की परतें सोने की परतें बन गई हैं.

आपको किनसे प्रेरणा मिली? इसके जबाब में वह कहती है कि 'प्रेरणा' मंजिल नहीं हैं. वह पड़ाव है. वह अनंत सागर है. वह सागर 'नवभारत -टाईम्स', दैनिक जागरण और अन्य विदेशी अखबारों का हैं. मुझे लगता है कि ईश्वर को मालूम है कि मुझे सुख की जरुरत है या दुख की. नदी के तट की तरह सुख है. जीवन नदी की धारा के समान है; जो बहती चली जा रही है.

महिला लेखिकाओं या पत्रकारों की स्थिति के संबंध में वह कहती है-इसमें शक नहीं कि महिलाओं ने कहीं-कहीं समाज को समाज पीछे छोड़ दिया है. लेकिन, समाज आज भी, उसके साथ सौतेला व्यवहार करता है. उसे और उसकी उपलब्धियों को पिता, भाई, पति या बच्चे सक्षम नहीं समझते. यह उनके जन्म जन्मांतर के गुलामी संस्कारों का परिणाम हैं. अपनी अस्मिता के लिए महिलाओं को संघर्ष करना पड़ेगा. आमतौर पर कामकाजी महिलओं को वह पत्रकार या लेखिका हो उसे उसका पति ही मानसिक कष्ट देता है. अशिष्ट, अपशब्दों का प्रयोग अक्सर महिलाओं के लिए किया जाता है. ऊँची पदासीन महिलाओं के प्रति भी पुरुषों की दृष्टि दूषित रही है.

हमारे यहां पुरुष वर्ग अपनी बीबी को तालों में बंद रखना पसंद करते है. जबकि साथ ही महिलाओं को येन-केन प्रकारेण आगे नहीं बढ़ाना चाहते. उदाहरण के लिए रवीन्द्रनाथ टैगोर की बहन स्वर्ण कुमारी देवी को लिया जा सकता है. वह संपादिका व विदुषी थी, लेकिन रवीन्द्रनाथ जी ने उनको कभी आगे आने नहीं दिया. वो डरते थे कि वह उनसे आगे निकल जाएगी.

डॉ० बुद्धिराजा को परिवार के साथ वक्त बिताना अच्छा लगता है, लेकिन अपना काम छोड़कर नहीं. वह बताती है कि मेरा परिवार बहुत बड़ा है. मैं सिर्फ खून के रिश्ते को परिवार नहीं मानती. मैं सिर्फ भारत की नहीं, एशिया की हूँ.

फुर्सत के क्षणों में शास्त्रीय संगीत सुनने की शौकिन डॉ० राज को वाद्य संगीत लुभाता है. कभी-कभी वह चुपचाप बैठकर अपने मन के भीतर से संगीत के नाद को महसूस करती है. इसके अलावा, पुष्प-सज्जा और घर को साफ-सुथरा रखना उन्हें बेहद पंसद है. प्रायः सुंदर-सुंदर चीजें खरीदना अच्छा लगता है. आकर्षक चीजें अपने इष्ट मित्रों के लिए खरीदती हैं. इस क्रम में कभी-कभी वह कीमत की परवाह भी नहीं करती.

कैरियर के शुरुआती दिनों की एक घटना पर प्रकाश डालते हुए वह कहती है कि पंडित वियोगी हरी जी से मेरी भेट हुई. उन्हीं के यहॉ डॉ० रामधारी सिंह दिनकर, सुमित्रानंदन पंत, मैथिलीशरण गुप्त और सियाराम शरण गुप्त से मेरा परिचय हुआ. सभी बारी-बारी से काव्य पाठ करते. मैं उनकी एक-एक भाव भंगिमा देख कभी मुग्ध होती और कभी सोचती. बाद में मैने यह महसूस किया कि हर कवि और कलाकार मेरी तरह हाड़-मास का बना है. वह हर दुर्बलता और सबलता को अपनी बाहों में समेटे रहता है.

रॉयल नेपाली अकादमी के फैलो और विख्यात साहित्यकार भवानी भिक्षु मेरे अच्छे मित्र थे. डॉ. नार्गेन्द्र, डॉ० रामधारी सिंह दिनकर, डॉ० हरिवंश राय बच्चन मेरे अच्छे शुभेच्छु थे. मुझे लगता है कि मेरा ईश्वर मेरे साथ है, वो हमेशा मेरे साथ रहेगें. मेरी जिंदगी में हर दिन कुछ नया घटित होगा. मुझे समझ नहीं आता कि जिस काम के लिए लोग लाखों रुपए खर्च करते है, वह मुझे अपने-आप मिल जाता है. मैं अपनी साधना के जरिए वहीं कर रही हूँ, जो ईश्वर मुझसे करवाना चाहते हैं.

समाज की आवाज, पत्रकारिता का वास्तविक रुप प्रर्दशित करने वाली हिंदी मासिक पत्रिका

'समाज प्रवाह',

संपादकः श्री मधुश्री काबरा, गणेश बाग, जवाहर लाल नेहरू रोड, मुलड (पं0), मुंबई–400080

डॉ० राज के मानस पुत्र और नवोदित लेखक **अखिलेश द्विवेदी** जो अपने नजरिए से उन्हें आककर, उनमें छूपी गहराई को देखने की कोशिश कर रहे है-

अदम्य साहसी है माता जी

डॉ० राज बुद्धिराजा का स्मरण होते ही मॉ और गुरु की मिश्रित प्रतिमा साक्षात् दिखने लगने लगती है. उनके बारे में वैसे तो मैंने कई बार लिखा है लेकिन उसी को फिर से लिखना ठीक नहीं क्योंकि उनके साथ मेरे कई संस्मरण ऐसे हैं जो दो चार पन्नों में नहीं समेटे जा सकते. एक बार माताजी ने मुझसे कहा-"अखिलेश, आजकल मुझे लिखने में कठिनाई होती है. लगता है ऑखो में समस्या है क्या करुँ?"

"ऑखों की जॉच करवाइये. हो सकता है कि मोतियाबिंद हो रहा हो." मैने शंका जाहिर की.

"ठीक है जॉच करवा लूंगी. पर आपरेशन........"

इसके आगे वह कुछ न बोलीं. मैं समझ गया कि आपरेशन से उन्हें डर लग रहा होगा. मैं नियमित उनके घर जाता. वे मुझे बिठाकर लिखवातीं और मैं उनके एक-एक शब्दों को अक्षरशः सादे कागज पर उतारता जाता. जब वह एक-एक शब्द अपने मन की अतल गहराइयों से मोती के समान पश्रिम से खोजकर लातीं तो मैं उनके चेहरे को अपलक निहारता रहता, न जाने कितने चित्र उनकीं ऑखों में उभरते और शब्दों का आकार लेने लगते.

धीरे-धीरे माताजी की ऑखों की रोशनी कम होती गयी और वह मेरा चेहरा तक न पहचान पाती. मेरे पैरों की आहट से न जाने उन्हें कैसे मेरे आने का एहसास हो जाता और वे अपी चिर-परिचित मुस्कान के साथ कहती-"आओ, अखिलेश..... कैसे हो..."

"मैं ठीक हूँ. आप अपनी ऑखों की जॉच क्यों नहीं करवाती?" मैं आते ही सवाल दागता. वे कुछ पलों के लिए मौन हो जाती. मैं मन ही मन कयास लगाता कि आखिर कौन सी ऐसी विवशता है कि माताजी अपनी ऑखों की जॉच नहीं करवाती. उनके पास रुपये-पैसों की कमी नहीं है, दिल्ली में बड़े-बड़े नेत्र सर्जन और अस्पताल हैं. मेरे अंदर यह बात घर करने लगी कि निसंदेह उन्हें लग रहा होगा कि मोतियाबिंद होगा तो आपरेशन भी होगा और वे आपरेशन थियेटर की कल्पना मात्र से सिहर उठती होगी.

"ऐसी भी क्या बात है.... दुनिया आपरेशन करवाती है. माताजी की तरह के लोग भी. अजीब होते है, . .." मैं मन ही मन बड़बड़ाता.

मेरे परिचित डॉ० संदीप अरोड़ा नेत्र सर्जन व रेटिना विशेषज्ञ हैं. मैं उनसे समय लेकर एक दिन माताजी को विशेष आग्रह करके उनके पास ले गया. उन्होंने बताया "दोनों ऑखों में मोतिया पक गया है. एक ऑख का शीघ्र आपरेशन न हुआ तो रोशनी हमेशा के लिए जा सकती है."

डॉक्टर की बात सुनकर हम सबके माथे पर चिंता की लकीरें खिंचनी स्वाभाविक थीं. माताजी के पुत्र यजुजी, पुत्र वधू, पौत्र त्रयंबक, बाऊजी आदि सबने जोर देकर प्रारंभिक जॉचें करवायीं व ऑपरेशन की तिथि निर्धारित कर दी गयी. किंतु दूसरी तरफ प्रारंभ वैल्फेयर फाउंडेशान के महासचिव व युवा कवि मेरे परममित्र ललित झा एक काव्य गोष्ठी का प्रस्ताव लेकर शाम को माता जी के पास आ गये. इससे पहले की हम लोग उन्हें कुछ बताते उन्होंने काव्यगोष्ठी की तारीख ठीक उसी दिन रखी जिस दिन उनका आपरेशन होना था. मैं इस प्रस्ताव को सिरे से नकारना चाहता था. किंतु माताजी ने कभी ललित से कहा था कि वे युवाकवियों की गोष्ठी अपने ही घर में बनी हालनुमा बैठक में करवायेंगी. "ठीक है, उसी दिन गोष्ठी होगी. सारी व्यवस्था करवा दूंगी." माताजी ने एकाएक कहा.

"लेकिन.... उसी दिन आपकी ऑख का आपरेशन है!" मैंने उन्हें याद दिलाते हुए आश्चर्य व्यक्त किया था.

"कोई बात नहीं. काव्यगोष्ठी मेरे लिए यज्ञ के समान है. जीवन क्षण-भंगुर है अखिलेश.... मैं इस यज्ञ को अपने घर में होने से कैसे रोक सकती हूँ. अगर उस दिन मुझे कुछ हो जाये तो भी इस गोष्ठी को स्थगित मत करना. ..." इतना कहकर वह मौन हो गयी. मेरे कानो में मानों असंख्य शंख और घंटिया बजने लगी हो, वेदों के मंत्र कई युवा स्वर पढ़ रहे हो. ललित भी अवाक् रह गया. जब उसे पूरी बात का पता चला तो वह गोष्ठी किसी दूसरी तिथि को करवाने की जिद करने लगा. किंतु माताजी का मौन न टूटा, मानों वह गहरी समाधि में लीन हो गयी हों. मैं समझ गया कि वह अपने वक्तव्य से टस से मस होने वाली नहीं है. ललित और मैं उनके मौन को आदेश मानकर वापस लौट आये. मैं आपरेशन से पहले की मेडिकल औपचारिकताओं में जुट गया. और ललित काव्यगोष्ठी की तैयारियों में. हालांकि ललित के चेहरे से गहरा **शेष पृष्ठ ४८..... पर**

मानस पुत्र **ललित कुमार झा** जो डॉ० राज की हर तरह से सेवा करके उनसे आशीर्वाद हासिल करते है-

डॉ० राज बुद्धिराजा
साहित्य के आकाश पर एक चमकता सितारा

जीवन एक लम्बी दूरी की यात्रा है. इस पर लोग चलते हैं. इस यात्रा में नए-नए लोगों, नए-नए अनुभवों से व्यक्ति का सामना होता है. कुछ लोग, कुछ अनुभव ऐसे होते हे जो अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं. व्यक्ति अगर चाहे तो वह उन अनुभवो, उन लोगों से सीख सकता है अन्यथा उनींदी में देखे किसी धुधले सपने की तरह उसको बहुत जल्द भुला सकता हैं.

स्मृतियों की इसी राह पर जब पीछे मुड़कर देखता हूँ तो सहज सजीव हो उठता है डॉ. राज बुद्धिराजा का प्रथम दर्शन-सुप्रसिद्ध लेखिका, शिक्षाविद् और साहित्य सेवी. डॉ. राजुबद्धिराजा से पहला परिचय साहित्य के क्षेत्र में अपनी अलग पहचान बनाते नवोदित लेखक एवं पत्रकार अखिलेश द्विवेदी के माध्यम से हुआ. अखिलेश उस समय डॉ० बुद्धिराजा जी के साहित्य लेखन में सहयोग के लिए उनके पास प्रतिदिन जाया करता था. उस समय वो कुछ अस्वस्थ चल रही थी, एक दिन अखिलेश ने मुझे भी डॉ. राज बुद्धिराजा से मिलने के लिए चलने को कहा और मैंने भी सहर्ष स्वीकृति में हामी भर दी. फोन पर अखिलेश ने उन्हें मेरे आने की सूचना दी. हम लोग निश्चित समय पर उनके यहॉ पहॅुच गये. हमने वहॉ पहॅुचकर उनके चरण स्पर्श किए और उन्होंने स्नेहिल भाव से हमें आशीष दिया. अखिलेश उन्हें माताजी के सम्बोधन से पुकारता था. अतः मैने भी उन्हें माताजी कहकर ही पुकारा.

माताजी के प्रथम दर्शन में ही मुझे उनके अन्दर मातृत्व की एक ऐसी छाया दिखाई पड़ी जिससे लगा कि ये तो सच ही माताजी कहे जाने लायक हैं. पहली बार में ही एक अन्जान से उनकी आत्मीयता देखकर यह सहज विश्वास ही न हुआ कि ये इतनी सौम्य और साधारण सी दिखाई देने वाली महिला सुप्रसिद्ध साहित्यसेवी, अनेक पुस्तकों की रचयिता, भाषाविद् और जापान के सर्वोच्च नागरिक सम्मान से सम्मानित हैं.

इस प्रथम दर्शन के पश्चात कई बार माताजी से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ. हर वार वही आत्मीयता, वही सहजता और स्नेह. कुछ समय पश्चात अखिलेश की व्यस्तता के कारण मुझे उनके साहित्य-सफर में सहभागी बनने का सौभाग्य मिला. मैं नित्य उनके यहॉ जाने लगा और माताजी को और भी करीब से जानने उनको समझने का अवसर मिला. उस समय माताजी का स्वास्थ्य भी कुछ ठीक न था. इस कारण मैं कई-कई दिन उनके पास रह जाता. माताजी का कोमल स्नेह मुझे यह महसूस ही नहीं करने देता कि मैं अपने घर से बाहर हूँ.

माताजी के इस समिप्य, इस निकटता ने मुझे उन्हें एक खुली पुस्तक के रुप में पढ़ने का मौका दिया. बात करते-करते वे अतीत में खो जाती और मैं एक खुले हुए उपन्यास के पन्नों की तरह पढ़ता जाता.

माताजी के मन पर उनके माता-पिता के धार्मिक संस्कारों ने बहुत प्रभाव डाला. पॉच वर्ष की अल्पायु में ही वेद की ऋच्वाओं को कंठस्थ याद कर उसका पाठ करना उनके धार्मिक संस्कार को कुशाग्र बुद्धि का ही द्योतक है. बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि की धनी, विलक्षण प्रतिभा की धनी होने के कारण ही उस समय लड़कियो की शिक्षा पर ध्यान न दिए जाने के बावजूद उन्हें शिक्षा देने को राजी हो गए. कोटअद्दू की स्थानीय पाठशाला में उनकी प्रारंभिक शिक्षा पूरी हुई. किताबी ज्ञान के अतिरिक्त घरेलू काम-काज में भी उनकी बहुत अधिक रुचि थी. बचपन में ही माताजी सिलाई-कढ़ाई आदि में भी पारंगत हो गई थी.

भारत की आजादी और भारत-पाकिस्तान के विभाजन को माताजी ने अपनी ऑखों से देखा और महसूस किया. भारत-पाक विभाजन के समय उनका परिवार लाहौर में ही था. उन्हें लाहौर छोड़कर भारत आना पड़ा. इस दौरान हुई हिंसा और नरसंहार को अपनी ऑखों से देखने वाली माताजी के मन में एक टीस उभर कर आयी कि क्यों लोग अपने निजी स्वार्थ के लिए इंसान को इंसानो से लड़ाते है. धर्म क्या यह कहता है इंसान, इंसान का खून करें? धर्म क्या यही है कि आदमी ही आदमी का घर जलाये. पर जब सत्ता ही लक्ष्य बन जाए तो कुछ भी संभव हैं. इन सभी प्रश्नों और इससे जनित पीड़ा को अपने मन में दबाये माताजी अपने परिवार के साथ दिल्ली आ गई.

माताजी ने शारदा विद्यालय, सब्जी मंडी, में दाखिला लिया. पूरे मन से पढ़ाई की और परीक्षाओं में हमेशा अब्बल रहीं. पढ़ाई के दौरान ही उनका साहित्य प्रेम जागा. हिंदी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद द्वारा आयोजित परीक्षा अच्छे अंकों से पास करने के

अतिरिक्त साहित्य भूषण, साहित्यप्रभाकर तथा साहित्य रत्न आदि की परीक्षा भी माताजी ने सफलता पूर्वक उत्तीर्ण की. इसके अलावा पाठ्यक्रम में पढ़े लेखकों, कवियों आदि से मिलने का शौक भी माता जी को था. शायद यही कारण है कि अपनी छोटी उम्र में ही मिले साहित्यकारों की स्मृति-गाथा आज भी उनके मन में जीवंत हैं. उपेन्द्र नाथ अश्क, बनारसी दास चतुर्वेदी, रामधारी सिंह दिनकर, महाकवि निराला, हरिवंश राय बच्चन, डॉ. नगेन्द्र आदि बड़े-बड़े साहित्यकारों की चर्चा जब माताजी करती तो ऐसा लगता कि मानो ये सब आज भी आमने-सामने बैठकर आपस में बातें कर रहे हों.

महात्मा गॉधी, जवाहर लालनेहरु, इंदिरा गांधी, डॉ. शंकर दयाल शर्मा आदि राष्ट्र नेताओं से भी प्रत्यक्ष मिलने का सौभाग माता जी प्राप्त हुआ. बचपन में गॉधी जी के चरखा आंदोलन का प्रभाव माताजी के बालमन पर काफी गहरा पड़ा. माताजी भी अक्सर अपने घर के बड़ों-बूढ़ों के साथ चरखा कातर्ती.

अपने देश में शादी बहुत छोटी उम्र में ही कर देने का रिवाज रहा है. माताजी जी शादी भी बहुत छोटी उम्र में ही हो गई. ससुराल वालों के विरोध के बावजूद माताजी ने पढ़ाई जारी रक्खी. वहीं से माताजी ने बी.ए. इतिहास व पंजाबी में किया. परास्नातक व पी. एचडी की. साहित्य का शौक तो उन्हें बचपन से ही था. यहॉ तक आते-आते विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में वो छाने लगीं. उनके लेख एवं कहानियां नियमित किसी न किसी पत्रिका-अखबार में आने लगे. देव के काव्य पर की गई शोध ने उन्हें एक विशेष पहचान दी. महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज का आर्शीवाद सदा माताजी के साथ रहा. महात्मा जी के ऊपर ही लिखित 'सौम्य संत आपकी पहली पुस्तक थी. महात्मा जी के आर्शीवाद से माताजी की कलम की धार समय के साथ और पैनी होती गई. शायद यही कारण है कि अब तक आपकी साठ से भी अधिक पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका है.

शोध के पश्चात माताजी ने दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रवक्ता की नौकरी कर ली. अपनी साहित्यिक छवि ओर पढ़ाने की विशिष्ट शैली के कारण माताजी विश्वविद्यालय में विशेष लोकप्रिय थी. विश्वविद्यालय में इन्होने अनेक साहित्यिक कार्यक्रमों का आयोजन भी किया.

एक पुत्र एवं एक पुत्री के जन्म एवं उनकी जिम्मेदारी बढ़ने के बावजूद माताजी का अध्यापन एवं साहित्य साधना निर्बाध गति से चलती रही. सन् १६७६ में भारत सरकार की तरफ से माताजी मारिशस गईं. यह इनकी पहली विदेश यात्रा थी.

माताजी के अध्यापन का ही प्रभाव था कि जब भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गॉधी जापान गई तब उन्होंने विशेष रुप से तोक्यो विश्वविद्यालय मं पढ़ा रही माताजी से मिलने की इच्छा जाहिर की. माताजी की स्मृति में वहॉ इंदिरा गॉधी से हुई मुलाकात ज्यों की त्यों बनी हुई है.

जापान में रहते हुए माताजी का आकर्षण जापान की ओर हुआ. वहॉ की संस्कृति, वहॉ के लोग, आचार-विचार और आवो-हवा ने उन्हें अपने सम्मोहन के पाश में बांधा. शायद यही कारण है कि यहॉ भारत में रहते हुए भी माताजी जापानी भाषा और संस्कृति के भारत में प्रचार-प्रसार को लेकर प्रतिवर्ष कोई न कोई बड़ा कार्यक्रम करती ही रहती हैं. जापानी भाषा, संस्कृति, रहन-सहन आदि पर अनेक पुस्तकें माताजी ने लिखी हैं.

जापान यात्रा एवं वहॉ अपनी सुकीर्ती फैलाने के साथ ही माताजी के विदेश यात्रा का दौर समाप्त नहीं हो जाता. जापान के अतिरिक्त माताजी ने लंदन, इटली, पेरिस, हालैंड, पोलैड, स्विटजरलैंड तथा पाकिस्तान आदि देशों की यात्राए कई बार की एवं अपने सुयश का डंका इन देशो में बजाया. इन देशों के कई छात्र माताजी से नियमित मिलने के लिए भारत आते रहते हैं. यहॉ माताजी के निर्मल प्रेम की छॉव उनको अभिभूत कर देती है. माताजी के कई विदेशी छात्रों से मिलने का गौरव मुझे भी मिला. माताजी के कई विदेशी छात्र-छात्राएं नियमित पत्र लिखते हैं और माताजी उनको अपना आर्शीवाद देती है.

माताजी के साहित्य प्रेम ने उनको भरपूर प्रतिष्ठा दी. जापान के प्रति किए गए उनके उपयोगी कार्यो के लिए जापान के सम्राट ने जापान के सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'दि ऑर्डर ऑफ दि सिक्रेट ट्राईयर गोल्ड रेज दि विद नेक रिबन' से सम्मानित किया. दिल्ली सरकार ने भी उन्हें 'साहित्यकार सम्मान' एवं 'साहित्यिक कृति' सम्मान से सम्मानित किया. इसके अतिरिक्त भी उन्हं सैकड़ों छोटे-बड़े पुरस्कार एवं सम्मान मिल चुके हैं.

कालिन्दी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय से रीडर के पद से रिटायर होने के पश्चात भी माताजी के साहित्य प्रेम में कोई कमी नहीं आई है. वो आज भी साहित्य-साधना में रत है. साहित्य के प्रति उनकी उत्कंठा इस बात से जानी जा सकती है कि जब वो बहुत अधिक बीमार थी तब भी उनकी साहित्य साधना निरंतर चलती रही. खुद लेखन में सक्षम न होने पर वो सहयोगी की

सहायता से साहित्य-साधना करती रहीं. अब ठीक हो जाने पर फिर से पूरे उत्साह से इसी साधना में रत हो गई हैं. उनका लेखन निर्बाध गति से निरंतर चल रहा है.

माताजी अर्थात डॉ० राजबुद्धिराजा नाम को जो ध्रुव तारा साहित्य रुपी आकाश में निरंतर चमक रहा है उसकी छवि सदा उज्जवल ही रहेगी और इस मार्ग पर आने वाले नवोदित तारों का मार्ग सदा रौशन करती रहेगी.

++++++++++++++++++++++

अदम्य साहसी है माता जी

पृष्ठ ४५ का शेष.....

अपराध बोध परिलक्षित हो रहा था किंतु वह भी माताजी के आदेश के सामने विवश था.

माताजी अपनी खुशी सबसे बॉटती है किंतु दर्द अकेले सह लेती है. आपरेशन की तकलीफ उन्हें अकेले ही सहनी थी, हम लोग तो सिर्फ उनके लिए ईश्वर से प्रार्थना ही कर सकते थे. उनके घर के लोगों को छोड़कर कोई भी बाहरी व्यक्ति अस्पताल में मौजूद नहीं था. होता भी कैसे, अपने असंख्य शुभचिंतको को उन्होंने इस बारे में हवा तक न लगने दी थी. मैनें उनके डर की चर्चा डॉ. अरोड़ा से कर दी थी. मेरा अनुरोध था कि उनका आपरेशन उन्हें बेहोश करके किया जाये ताकि उन्हें असहय पीड़ा का सामना न करना पड़े. पता नहीं माताजी को मेरी इस मंशा का पता कैसे चल गया. उन्होंने डॉक्टर से कहा-"यह अखिलेश तो नाहक ही डर रहा है. आप मेरा आपरेशन बिना बेहोश किये ही करिये. मैं बहुत पीड़ा बरदाश्त कर सकती हूँ." इतना कहकर वह चुप हो गयी. वही समाधिस्त मौन..... मुझे लगा कि वह अपने जीवन की न जाने कितनी पीड़ाओं की स्मृति में डूब गयी हैं. उन पीड़ाओं के सामने यह क्षणिक पीड़ा कुछ भी नहीं. डॉक्टर ने आपरेशन थियेटर में ले जाने से पहले माताजी की भौहों के ठीक नीचे (आँख में) पूरी सुई चुभो दी जिसकी सिरिंज में इंजक्शन भरा था. मैं यह देखकर दंग रहा गया कि माताजी की ऑख में करीब दो इंच लंबी सुई चुभो दी गयी किंतु उन्होंने उफ् तक न किया. वही पूर्ववत समाधिस्त मौन..... मेरे रोंगटे खड़े हो गये, शरीर पसीने से लथपथ हो गया. मैं डर के मारे बाहर निकल आया. आपरेशन हो गया. माताजी की ऑख में पट्टी बॉध दी गयी थी. जब हम लोग सहमे हुए उनके पास गये तो वह आहट सुन कर मुस्कराने लगी.

"आप सबको बधाई हो. मेरा आपरेशन सफलतापूर्वक हो गया." तब तक त्रयंबक उनके हाथों को सहलाने लगा था. हम लोगों के होठों पर संतुष्टि भरी मुस्कान फैल गयी. ऑपरेशन सुबह करीब दस -ग्यारह बजे हुआ था. दो घंटे माताजी को वहीं विश्राम करने की हिदायत देकर डॉक्टर साहब दूसरे मरीज का आपरेशन करने चले गये. हम लोगों ने सोचा कि उन्हें ज्यादा देर तक घेर कर न रखा जाये. सभी लोग कमरे से बाहर जाने लगे. मैं सबसे पीछे था.

"अखिलेश...." उन्होने कहा.मैं ठिठककर वापस मुड़ा.

"ललित को फोन मिलाओ. पूछो तैयारी में कोई कमी तो नहीं हैं." मै सन्न रह गा. "कैसा जीवट है, इस वृद्ध शरीर में." दूसरे ही क्षण मुझे एहसास हुआ कि "बूढ़ा तो सिर्फ शरीर होता है."

"ठीक है, मैं बात कर लूंगा." इतना कहकर मैं बाहर चला आया. मैं जानता था कि उनके पास बैठा तो वह गोष्ठी के विषय में बात करती रहेगीं. ज्यादा बोलने के लिए डॉक्टर ने मना किया था. मैंने ललित से तैयारियों के बारे में बात की. मैं जानता था कि वह मेहनती है, माताजी के आदेशों का पालन करने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ेगा. अस्पताल से हम लोग करीब एक बजे घर की ओर चल पड़े. रास्ते भर माताजी गोष्ठी के बारे में ही मुझसे पूछती रहीं. करीब दो-ढ़ाई बजे हम सब घर पहुँच गये. गेट खुला था. मैने और त्रयंबक ने माताजी के हाथ पकड़ रखे थे. बैठक के बाहर जूते-चप्पलों की कतार देखकर मैं समझ गया कि गोष्ठी अपने शबाब पर है. बैठक के दरवाजे पर पहुँचकर माताजी ने हाथ जोड़ लिए. सब अवाक्...सना मन्न... . मैने समझ लिया कि माताजी यज्ञाहुति दे रहे विद्वानों का अभिवादन कर रही हैं.... उनके लिए कोई छोटा-बड़ा नहीं. अंदर सभी कवि बैठे थे. ललित झा मौके की नजाकत देखते हुए मत्रोच्चर करने लगा.

भीड़ से इस भरे जग में
सिंह बनकर तुम रहो.....।।

माताजी मत्रोच्यार सुनकर गद्गद् हो उठी और मैं उनकी ओर देखकर भावविभोर......

साहित्य जगत की अनूठी मासिक पत्रिका
यू एस एम पत्रिका
संपादकः डॉ0 उमाशंकर मिश्र
695, न्यू कोट गांव (तेजाब मिल) जी.टी.रोड,
गाजियाबाद–201001

बसलर अंग्रेजी

बसलर अंग्रेजी

परिवार की नजर में

डॉ० राज की माताजी शान्ति अग्निहोत्री जी क्या सोचती है अपनी इस डालडी पुत्री के बारे में:

तब वो ऐसी थी

लाहौर नगर में रेलवे रोड पर हम रहते थें. १६ मार्च, १६३७ को १२-१ बजे हमारे घर में एक ५ पौंड की कन्या ने जन्म लिया. मैं तो देखकर डर गई. उठाते भी डर लगता था. कहीं फिसल न जाये. मेरी सासू मॉ इसे कपड़ें में लपेटकर रुई को दूध में भिगोकर दूध पिलाती, सेवा करती, तीन मास बाद यह पूरी बच्चा बनी? हवन कराकर राजकुमारी नाम रखा? ज्यों-ज्यों बड़ी होती गई त्यों-त्यों इसकी बुद्धि तीव्र होती गई. यह सबको अच्छी लगने लगी, पढ़ने में भी फस्ट, बातें भी समझ से करें.

१७ वर्ष के बाद इस बेअी की विवाह बुद्धिराजा के परिवार में शिव जी से हुआ. यह रतन, भूषन, अमरकट, साहित्य रतन पढ़ाओ क्योंकि इसके पिताजी कहते थे लड़की को अंग्रेजी पढ़ाना ठीक नहीं हैं.

ससुराल परिवार में अनुकूलता न होने से गुरु जी की आज्ञा से इंग्लिश पढ़नी शुरू की. मैट्रिक, बी.ए., एम.ए. , पी.एच.डी. करने के बाद भारत सरकार ने इसे जापान में हिन्दी पढ़ाने भेजा.

अब यह बेटी आपके सामने हैं. देश, विदेश में, यहां से वहां इसको नाम मिल रहा हैं. ऐसी बेटी को पाकर मैं ध न्य हो गई. मेरी यही शुभकामना और आर्शीवाद है कि जब तक यह सृष्टि है इसका नाम रहे.

डॉ० राज की भाभी श्रीमती सरोज कुकरेजा के अपनी ननद के प्रति क्या विचार है:

परम श्रद्धेय पूज्य बहिन जी के ७० वें जन्म दिवस पर

आदरणीय बहिन जी ने अपने जीवन में बहुत अधिक तप किया है. शादी के बाद ही इन्होंने अंग्रेजी पढ़ी है. इससे पहले इन्हांने हिन्दी में रतन भूषण और प्रभाकर ही पढ़ा था. बचपन में ही लगभग सात वर्ष की आयु में ही वह वेद सुन्दर स्वर के साथ पढ़ने लग गई थी. जब उनसे पूछा गया कि यह वेद किसने पढ़ाया है, तो उनका उत्तर था पढ़ाया नहीं गया. वह तो हृदय में लिखे हे, वह तो स्वयं ही पढ़े जाते हैं.

वह सदा शान्त स्वभाव और अपने ही विचारों में मस्त रहती हैं. सदैव सोचती व लिखती ही रहती है. कभी किसी विषय पर और कभी किसी पर. उन्होंने शुरु से ही लेखन और पढ़न कार्य में ही अपना पूरा जीवन व्यतीत किया है. उन्होनें विदेशो में भी हिन्दी पढ़ाने का कार्य किया है. वहॉ भी नई-नई चीजें सीखी है. अस्वस्थ होने पर भी किसी दूसरे को आभास नहीं होने देती. दूसरो के सामने भी स्वस्थ व हंसमुख बनी रहती है.

उन्होने अपने बच्चों का जीवन अच्छा बनाने के लिए भी अधिक परिश्रम किया है. सभी कार्य उन्होने स्वयं किए है. भगवान से प्रार्थना है कि वह सदा स्वस्थ और निरोग रहें. आगे भी उन्नति के पथ पर बढ़ती रहें. उनका जीवन सदा सुख से बीते. हमारी यही शुभकामना हैं.

प्रेम प्रकाश, मामा की नजर में

डॉ० राज बुद्धिराजा दुनिया इसी नाम से जानती एवं पहचानती है पर मैं 'कुमारी'. बचपन का नाम जब से समझ आई से जानता हूँ. बचपन से साथ-२ खेले बड़े हुए. संगीत शिक्षा भी साथ-२ पाई. तीव्र बुद्धि साहित्य की ओर रुझान होने के नाते साहित्य की ओर चल पड़ी. पीछे मुड़कर नहीं देखा, दिन प्रतिदिन नई-नई उच्चाईयों को छूती चली गई. जिस स्थान पर आज है डॉ० राज बुद्धिराजा यह जीवंट स्वर्ग है. जिस की चमक दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है. इन की लेखनी परिवार-समाज मानवीय सम्बधों पर बहुत गहरा असर छोड़ चुकी है. यही कारण है कि इनकी पुस्तकें, विचार, एक बार आरम्भ कर ले समाप्त किए बगैर छोड़ नहीं पायेगा.

....

डॉ० राज की पुत्री सुनीता बुद्धिराजा के अपनी मां के प्रति क्या है विचार:

काश कि मैं अपनी मां की टीस को शब्दबद्ध कर पाती

जिंदगी के किसी एक मोड़ पर मेरा सब कुछ छूट गया. मेरे साथ रहीं तो केवल मेरी मॉ, मेरे हर आँसू और हर मुस्कान में साथ-साथ.

अपने सीमित साधनों में उन्होंने हमेशा मुझे शिखर तक पहुँचाया. उनका कहना है 'जो भी काम करो, मनोयोग से करो, हर काम श्रेष्ठ हो.' उनकी दृष्टि में प्रथम स्थान ही महत्वपूर्ण है. दूसरे और तीसरे स्थान के लिए कोई स्थान नहीं हैं.

काश की मैं उनकी टीस को शब्दबद्ध कर पाती.

जापानी विद्यार्थियों की नजर में

About Dr. Buddhiraja

The day came when I had to leave the YMCA Guest House, where I had stayed for two weeks. There was a champa tree in the garden. It had no leaves then, but the trunk would become green and come into bud soon. Cinerarias had come into flower during the two weeks. Birds were chirping. Spring was coming to India.

Looking up at the blue sky, Dr. Buddhiraja said, "Fresh air!" She is a poet, a linguist, a writer. She used to teach Hindi at Delhi University and Tokyo College of Foreign Languages. She is now the President of Indian Council for Japanese Culture." I wrote poems about trees, but I connected trees with people." she said. I felt her sympathies with all living things. Her drawing room was oriental, with a great golden deity which symbolized India. The deity's smile was like that of a Buddha.

On Sunday, when Akademi was closed, five Japanese people, including me, were invited to lunch. Talking of meals, she was always there at the gallery and took me to good restaurants during the period of my exhibition from the day of carrying in through the day of carrying out and the next day too. I was deeply impressed by this beautiful generosity of hers. It seemed as if I had met my Indian mother.

Tatsuko Hiraoka, famous painter, Japan.

....

When the heart is hand and purched up. Come up me with a shower of mency.

When grace is lost from life. Come with a burst of song. When tumultuous work raises its din on all sides shutting me out from beyond. Come to me my lond of silence with the peace and rest (Gitanjali)

Sayonara Tinukshi satokshi

....

Do you enjoy days in Japan I hope you come back with so many memories and also hope to occupy a little space of your heart. I am sure to talk about these good old things some days in our future.

Nobuki Kusakai

....

Do you remember that you gave me chocolates in your room? When I will be grown up I am sure to visit your country.

From **Risa** written by her mother Erina

....

मुझे हमेशा नाराजगी आ रही थी कि मैं आपसे हिंदी में अपनी मनचाही बात नहीं कर सकता पर मुझे आपकी कम्पोजीशन कक्षा बहुत पंसद थी. हमारी हकलाती लेकिन मजेदार कम्पोजिशन सुनने के बाद आपकी मुस्कुराहट मेरी स्मृति से कभी न मिट सकेगी. **शिन्ता**

....

मुझे ऐसा लगता है कि मैं बहुत सौभाग्यवान हूँ, क्योंकि दो साल के लिए आपके साथ हिन्दी नाम की सड़क पर चलता रहता था. टूटते परिवेश के नाटक की स्मृति को भूल नहीं पाऊंगा. फिर मिलेगें.

ताकाशि नाकागावा (विवेक)

....

आपसे मिलकर मुझे बड़ी खुशी हुई है और अब आपसे अलग होना नहीं चाहती. किसी समय में भारत जाऊंगी और तब जरुर आपसे मिलने जाऊंगी. तब तक आप स्वास्थ्य की सावधानी की बरतें मैं आपकी कृपा नहीं भूलूंगी. आपको बहुत-बहुत धन्यबाद देती हूँ. नमस्तें.

नाकायामा ताकाको.

....

आज अब भारत वापस जाएंगे. मुझे भी आपके साथ जाना चाहिए. मैनें विदेश देखने के लिए विद्यालय मं प्रवेश किया. आपके साथ दो साल से पढ़ रही थी. आप केवल भाषा की अध्यापिका नहीं आप हमारी भारतीय माताजी भी हैं. भारत में या जापान मं फिर मिलेगें. टेक केयर ऑफ योर सेल्फ.

ओगेकिदे यासाकी ओको

....

आपके दो साल के पढ़ाने के लिए आपको बहुत धन्यबाद देता हूँ. मैने बहुत आनंद किया. मैं भी अगले महीने से इकेबाना पढ़ाना चाहती हूँ. भारत लौटकर भी जापान को याद रखिए. **एरिका इतो**

....

आपके साथ पढ़ते-पढ़ते दो साल हो गए मुझे ये दिन बहुत छोटा लगता है. उन दिनों की बात मुझे साफ-साफ याद हैं.

आपका बहुत धन्यबाद मैंने आपसे हिन्दी भाषा और भारत के बारे में बहुत सी बात पढ़ी. मैं इस दिसंम्बर में भारत जाने का योजना करता हूँ. तब फिर मिलेगें. अंत में आपका बहुत धन्यबाद. **मित्सुहिरो कायावाद**

....

जब ५ अगस्त १९८२ में, मैं सबसे पहले जापान में आपसे मिला था तब मैं केवल एक शब्द कह सका-नमस्ते. आप गुलाबी साड़ी पहनती थी मुझे याद है और इस बार तो मैं क्या कहूँ भारत में जरुर मिलेगें. मै सदा की तरह आपकी छात्र ही रहूँगी. **कायानो ईवाबूयी**

....

मैंने आपसे बहुत अच्छी बात सीखी भारत की बात हिन्दी भाषा और साड़ी पहनने का ढंग भी. मैंने आपके साथ पढ़ा तो बहुत रोचक था. मैं आपको कभी नहीं भूलंगी. आपकी मेहरबानी **तोइजुमी हिरोको**

....

मैं सोचता हूँ कि हिमालय पहाड़ चढ़ने के लिए भारत जाऊंगा. उस समय हम दोनों मिलें. हीदेनोरी उतोजावा

हमारी प्रोफेसर बुद्धिराजा जी आपने अपनी अकल व बुद्धि से हमें सत्य रास्ता दिखाया है. हमारे दुःख को अब शब्दों में लिख नहीं सकती हूँ. आप हमेशा हमारे मनों में रहती है. आशा करते है आपके मन में भी हम रहेगें पर अगर हम नहीं फिर भी आप हमारे मनों में हैं. आप ही हमारी इज्जत देने वाली हैं. हमारी माताजी हमारे सारे इज्जत और प्यार आपके लिए सदा होते हैं. धन्यबाद

आपकी छोटी बेटी **यूको हिरायशी जुही**

....

प्रिय मेरी मॉ जी जैसी बुद्धिराजा जी दिन बहुत तेजी से जाते हैं. आपके और हमारे बीच में अधिक बाते हुई. मैं कभी नहीं भूलूंगी कि कितने बार 'झांसी का' शब्द उच्चरण करने का अभ्यास किया. पिस्तौल के स्वर न होने के कारण आपकी बाहों मे रोया. आप और सुनीताजी के साथ दिन-भर बातचीत की इत्यादि-इत्यादि. बुद्धिराजा जी फिर से जरूर जापान आइए. मैं भी जरूर भारत जाऊंगी. बहुत-बहुत धन्यबाद. **गोतो इकुमी.**

....

दो साल जल्दी गुजर गए हैं. क्षमा कीजिए मेरी हिन्दी अभी तक अच्छी नहीं होगी.(जापान में रहते हुए विदेशी भाषा सीखन सरल बात नहीं है.) लेकिन मैं इस विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में हुए हिन्दी भाषा के अलावा अनेक नई बातों को सीखने का अवसर मिला. (भारत के बारे में और इसके अलावा भी) आपने भी जापान में केवल हिन्दी पढ़ाने का काम ही नहीं किया. किन्तु अनेक अज्ञात बातें सुनी. देखी हुई होंगी. अब आप भारत लौट चुकी हैं. हमारे भविष्य के लिए यह अनुभव हमारे मनों में हमेशा एक असर डालता रहेगा. धन्यबाद **योशिहिरो नाकाहारा**

....

हमारी माताजी आपका बनाया खाना मुझे बहुत अच्छा लगता था. किसी दिन और एक बार खाना चाहता हूँ. आपके गाए गाने मुग्ध थे. किसी दिन और एक बार सुनना चाहता हूँ. हिन्दी तो अवश्य इसके अतिरिक्त भारत के रहन-सहन मैंने आपसे सीखे. यह अनमोल संपत्ति हैं. बहुत धन्यबाद.

इपीहाशी यूजी

....

मैं आशा करती हूँ कि आपका स्वास्थ्य अच्छा रहेगा और आप जापान जरूर आइए. **वातानाबे सायुरो**

....

जब मैं भारत गयी और आपके घर गयी तब आपके परिवार के लोग बहुत भले थे. मैं बहुत प्रसन्न थी. मैं अच्छे नहीं बोल सकती हूँ माफ कीजिए.

आपकी छात्रा

आकीको निशिनारी

....

अच्छी चाय के लिए क्या चाहिए? चाय की पत्ती, गर्म पानी, चीनी, दूध और सबसे महत्वपूर्ण बुद्धिराजा जी हैं. भारत में फिर मिलेगे.

सायाका मात्सुशीता

....

अच्छी हिन्दी मुझे आने के लिए मुझे बहुत कोशिश करना है. अगले गर्मी में मिलना चाहती हूँ. अच्छा नमस्कार.

कुसुमोतो केइको

....

मुझे बहुत दुःख है कि इतने जल्दी से आपसे अलग हो जाना पड़ता है लेकिन छोटे समय होते हुए भी जो दिन आपके साथ हम लोग बीते उनको अब मुझे प्यारा लगती है और आपसे मिलकर सचमुच बड़ी प्रसन्नता हुई है. आपकी बातचीत की कक्षा उपयोगी होगी. धन्यबाद. आप मेरी प्रथम आदरणीय भारतीय अध्यापिका है. मैं जरुर भारत जाऊंगी. उस दिन को मैं उत्सुकता से प्रतिक्षा करूं उस समय तक आपको अच्छा स्वास्थ्य आए. फिर मिलेगें, अच्छा नमस्कार

हरादा काज़मी

+++++++++++++++++++++++++++++++++++

अखबारों की नजर में डॉ० राज

हिंदी का हित, हित हिंदी है!

प्रिय पाठकों,
नई सदी की दहलीज पर खड़े हम खौफ़नाक भाषाई हमलों से आक्रांत हैं कि अब हर बात अंग्रेजी में ही संभव हो सकेगी, मतलब समाज, सभ्यता, संस्कृति, साहित्य, ज्ञान, सत्ता, व्यवस्था, बाज़ार, उद्योग, प्रचार, प्रसार, जीवन आदि सब कुछ हिंदी या किसी भारतीय भाषा में नहीं, सिर्फ अंग्रेजी में संभव हैं. इस हमले से उपजे भय को हमारे अतीत की परछाइंया सामान्य तौर पर और विस्तार देती हैं. ठीक ऐसे ही भयभीत परिदृश्य में जब डॉ. राज बुद्धिराजा सरीखी हिंदी सेविका अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सम्मानित हो रही हों तो भय के वेग को थम जाना पड़ता हैं, और ऐसा लगता है कि हिंदी भाषा की सेवा से वैभव और सम्मान दोनों ही हासिल करना आगे भी संभव हो सकेगा.

हिंदी में सिर्फ 'साहित्य लेखन करके जीवन चलाने वाले वरिष्ठ साहित्यकार विष्णु प्रभाकर के बाद यादवेंद्र शर्मा 'चंद्र दूसरे लेखक हैं जो सिर्फ साहित्य लेखन से अपना पूरा जीवन जीते आए हैं.

बहरहाल, राज जी के हिंदी सेवा संबंधी जापान-यात्रा के संस्मरण इस आशय से हम छाप रहे हैं कि नई सदी में भय से कापं रही नई पीढ़ी को एक संदेश मिल सके. सिर्फ़ हिंदी भाषा में लिख-पढ़कर जीवन के सभी सपने पूरे किए जा सकते हैं. हताशा की भाषा हिंदी नहीं हैं अर्थात् हिंदी का हित करें तो अपना भी हित सध सकता है. **संपादक**

'साभार 'गूंज''

डॉ. बुद्धिराजा के लेखन ने लोगों के दिलों का छुआ

नारी विमर्श व सामाजिक लेखन की सशक्त लेखिका डॉ. राज बुद्धिराजा की पुस्तकों में जीवन के लगभग सभी पहलू नजर आते हैं. लेखिका होने के साथ-साथ वह कवयित्रि व कथाकार भी हैं. शिक्षण एवं साहित्य संदर्भ में की गई जापान यात्रा के दौरान वह सबसे अधिक प्रभावित रही. जापान स्थित टोकियां विश्वविद्यालय में दो साल अध्यापन के दौरान वहां की संस्कृति को समझने का मौका मिला. सुर्या संस्थान में आयोजित साहित्यिक गोष्ठी में डॉ० राज की पुस्तकों पर चर्चा के दौरान बताया गया कि उन्होंने शिक्षण एवं साहित्य संदर्भ के लिए जापान के अलावा ब्रिटेन, इटली, पाकिस्तान व नेपाल जैसे देशों की यात्राएं की हैं. उनकी कहॉनी व सामाजिक लेखन में उनकी छवि सशक्त लेखिका के रुप में नजर आती है, वहीं उनकी कविता संग्रह में भी जीवन के कई रंग दिखते हैं. कविताओ में सप्तवर्णीमन, अभी-अभी साकूरा खिला है व अनकही सुधियां प्रमुख हैं. इसके तहत उन्होनें अपनी कल्पना का साकार रुप दिया हैं. वहीं उनके द्वारा लिखित कितना गहरा पानी, हरा समंदर व श्रेष्ठ बाल कहांनिया सरीखे कथा संग्रह भी खासे प्रसिद्ध हैं. हाशिये पर, एक नाम और भी, कौन सहे तेरी पीर, कुछ खरा कुछ खोटा सहित लगभग २८ पुस्तकें प्रकाशित हैं. कविता, कहॉनी व साहित्य लेखन के लिए उन्हें राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार से नवाजा गया हैं. साहित्यिक गोष्ठी के वक्ता प्रो. चमनलाल सप्रू, विनोद कुमार मिश्रा, रक्षा शुक्ला थे. इसमें डॉ. रामशरण गौड़, देवेन्द्र कुमार मित्तल, विजय विजन व आईएमए के अध्यक्ष डॉ. एसपी जैन मौजूद थे. **साभार दैनिक जागारण**

क्या पूर्व जन्म में जापानी थी लेखिका

सूर्या संस्थान में लगभग ५० पुस्तकों की लेखिका डॉ० राज बुद्धिराजा के व्यक्तित्व और कृतित्व पर बोलते हुए उक्त विचार वक्ताओं ने व्यक्त किए. १९३७ में लाहौर में जन्मी प्रभावशाली लेखिका डॉ. राज, देश के प्रतिष्ठित संस्थानों मे शिक्षण करने के बाद १९८१ में तोक्यो विश्वविद्यालय में हिंदी शिक्षण के लिए वहां गई. लेकिन वहॉ शिक्षण कार्य से इतर जापान की संस्कृति, समाज और वहॉ के जनसाधारण के दैनिक जीवन से इस कदर जुड़ गई कि यह सब उनके भावी जीवन का अंग बन गया. उन्होंने जापानी भाषा सीखी, १३ जापानी पुस्तकों का हिंदी में अनुवाद किया, जापानी हिंदी शब्द कोष लिखा, भारत जापान सांस्कृतिक परिषद की अध्यक्ष के रुप में भारत से जापान के संबधो को प्रगाढ़ किया, अनेक राष्ट्रीय पुरस्कारों एवं इंडो-जापान मैत्री के लिए समन्वय श्री पुरस्कार के अतिरिक्त जापान के सर्वोच्च नागरिक सम्मान से सम्मानित डॉ. राज भारत जापान के संबंधो के लिए इस कदर सक्रिय है कि उन्हें पूर्व जन्म की जापानी नागरिक कहा जाने कोई अतिश्योक्ति नहीं.

साभार 'साध्य दैनिक ईशान

साहित्य जगत की एक मिसाल हिंदी त्रैमासिक

समय सुरभि

संपादकः नरेन्द्र कुमार सिंह
शिवपुरी (नया जेल से पश्चिम), पो. व जिला–बेगुसराय, 851101, बिहार

[作家] ラージ・ブディラジャ女史

「バホット スンダル（とても美しい）」
目を細めて溜め息をつきながら日本の「桜」を思い浮かべるのは、ラージ・ブディラジャ女史、一昨年デリー大学のヒンディー語教授職を退官し、現在は執筆業に専心するデリー在住の著名な作家である。昨年からインド日本文化研究会の会長も兼任している。

ブディラジャ女史は18歳で結婚後、デリー大でヒンディー語を修め、アーグラー大学の博士課程に入った。
幼いときから「美」について考えることがとても好きだったというブディラジャ女史の選んだ研究テーマは、北インドに豪華絢爛な文化が咲いた中世に活躍した詩人「DEVA」。女性の美しさについて著述した詩人である。
詩人は、12歳の少女から35歳の女性を対象にし、ポーズや立ち居振る舞い、仕草、衣服、装飾品、内面の美しさなどを、貴婦人、庭師、アイロン師の妻などあらゆる階級の女性について賛美した。異性に関しての著述は当時、政府が大きく弾圧を行っていたが、詩人は民衆の支持を得、密かな人気を博したという。
インド中世の文学はたいへん難しいことに加え、文献が殆ど残っていないために、殆ど選ばれない研究テーマである。ブディラジャ女史は詩人に関する僅かな写本を探し集め、さらにデリーに住むDEVAの子孫に会いに行き、詩人の話を聞いて論文を仕上げた。
今まで誰もなし得なかった研究は高く評価され、翌年（1967年）からデリー大でヒンディー語を教える機会が与えられた。その後1977年、大学助成委員会から特別研究員として3年間の博士号取得後期間が与えられ、中世の詩人5名を選んで比較論をまとめた。
「毎日がとにかく忙しかったです。特別研究員に選ばれた年に、デリー大の女性教育委員会のコーディネーターにも選ばれたので、平日は研究と仕事（ヒンディー語の教授）、土日にコーディネーターの仕事をしました。家族はたいへん協力的でした。」

ブディラジャ女史が日本に興味を持ったのは7-8歳の頃、現在はパキスタン領の、生地であるコタアッドゥという美しい村に住んでいた時である。
学校の先生が、日本という国を雑誌か何かで見たのであろう、「日本もこの村と同じように緑で美しいわ。将来、是非行きなさい」と何気なく言った言葉が幼いブディラジャ女史の心を捉えた。
「私はいつか必ず日本に行く」と思ったブディラジャ女史に機会が訪れたのは1977年、学会でモーリシャスに行ったときのことであった。東京外国語大学の土井久弥教授が「ヒンディー語を是非日本で教えてみませんか」とブディラジャ女史を誘った。
インド政府機関を通しての話でなかったことから日本行きは難航を極めたというが、幸いなことにブディラジャ女史は当時、すでに出版会社18社から執筆を依頼されるかなりの著名人であったため、結局は日本行きを許され、1981年に日本の地を踏んだ。

● 日刊インドビジネス ● Nikkan India Business ● 平成 17 年 3 月 31 日（木）

「吉祥寺に外国人専用のアパートメントがあり、そこで暮らしました。15 名の外国人教授が住んでいて、そのうち女性の教授は私を含めて二人。中国人の女性教授でした。当時、日本は女性が職を持つことがたいへん珍しかったようで、『インドからの女性大学教授』と有名になり、サリーやインド料理、インドの政治、人口、国土について多くの質問を受けました。花が好きなので井の頭公園には毎日のように行きました。花屋に行くと『外国人ですか？』と聞かれるので、日本語で『そうです』と答えました。たいへん楽しかったです。近所の人は１人で住んでいるのを知って、とても親切にしてくれました。また、週末になると毎週、学生さんが来て日光や鎌倉に連れて行ってくれました。電車に乗って人々の様子を見るのもたいへん興味深かったですね。」

２年半の日本滞在で感じた日本人像については、次のように語る。

「日本人は皆とても勤勉。完璧な仕事を行います。いつも忙しくしていて簡単に人間や物事を信じません。でも、フィーリングが合えばすぐ心を開きます。問題に対して、真摯に取り組みます」。

「山河や海など、自然の美しさに関しては、日本とインドはどちらも同じように美しいと思います。 女性の美に関しては，日本は、『そこにあるだけで美しいもの。“詩”のような存在』です。これに対して、インドの場合は『男性を惹きつけるためにさらけ出す美しさ、先を争って自分を表現する“演劇”的要素を持つ美しさ』です。また、日本人は自然を愛しますが、インド人は自然はそこにあるものとしか見ず、頭は常に他のことで忙しいですね」

ブディラジャ女史は帰国後、日本について執筆、「ジャーパーン　メーリー　ニガーハ　メン（私の目から見た日本）」を上梓した。

それまではインド人の誰もが日本のことをあまり良く知らなかったというが、これを機に人々が「桜」や「琴」、「歌舞伎」、「能」、「生け花」など、日本文化について関心を持ち始めるようになった。また、富士山や寺院など、ブディラジャ女史の撮ったビデオがドアダルシャンにて放映されると一躍、日本ブームとなったという。

「日本については 12 冊を上梓しました。このうち一番心に残っているのは「ウパルブー　スーラジ　カ　デーシュ　ジャーパーン（日本・日が昇る国）」です。これは日本文化について詳しく書いたものです。日本の『good』を記しました。」

ブディラジャ女史の仕事は高く評価され、2003 年に日本より「勲章」を叙勲した。

「私は、天皇陛下に直接手紙などは出していません。私の『ペン』が幸運を授けてくれました。これに対して私は、やはり私の『ペン』でお返しをしたいと思っています」

ブディラジャ女史はこれまで、50 冊を上梓している。社会や女性問題、物語、エッセイなどテーマは多岐に亘る。

「友人を作って長くつきあい、どんな状態になっても友情を保持すること」はブディラジャ女史のポリシー。しかしながら一方で、「インドでの友人作りは、背景に損得勘定が必ずといっていいほど入ることが悲しい」と漏らす。

好きな言葉は「ハル ディン アブナ（日々は我のためにあり）」

毎日が幸福を与え、毎日が悲しみを与え、そして毎日が何かしら新しいものを与えてくれるという意。

「神は私の求めているものを、ある日突然、長い困惑の後に与えてくれます。人が人として完成するために必要なものを全て、神が与えてくれるのです。この素晴らしい毎日を感謝の意を持って生きていきたいと思います」。

ブディラジャ女史は最近、日本大使館の文化広報センターで「にっぽにあ」を読み、たいへん感動した。

「日本では90歳を超えた人間国宝の人々が、人生はこれからだ、とチャレンジしています。とても勇気づけられました。私もまだまだ。これからもっと多くのことにチャレンジしていきたい」。

「チャレンジ」は女史の生き方そのもの。今後の活躍が楽しみである。

दसवॉ दिव्य स्मृति पुरस्कार समारोह सम्पन्न

सागर. "आजादी के पहले हमारे यहॉ कैसे-कैसे धुरंधर विद्वान होते थे जैसे वासुदेवशरण अग्रवाल, मोतीचंद, रायकृष्णदास आदि. अम्बिकाप्रसाद 'दिव्य' जी भी इसी श्रेणी के रचकार और चित्रकार थे."ये विचार थे दिल्ली के प्रख्यात पत्रकार श्री गिरधर राठी ने ७ जनवरी ०७ को सागर में सम्पन्न दसवें अम्बिकाप्रसाद 'दिव्य स्मृति प्रतिष्ठा पुरस्कार समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में कहीं. कार्यक्रम की अध्यक्षता गौर विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति श्री शिवकुमार श्रीवास्तव ने की. इस अवसर पर श्रीमती उर्मिला शिरीष-भोपाल, श्रीमती रश्मि रमानी-इंदौर, श्री पवन चौधरी 'मनमौजी'-दिल्ली एवं डॉ. बानो सरताज-चंद्रपुर को प्रतिष्ठापूर्ण अम्बिकाप्रसाद दिव्य स्मृति पुरस्कारों से सम्मानित किया गया. इसी क्रम में सागर के श्री निर्मलचन्द्र निर्मल', श्रीमती सुलभा मकोड़, श्री महेश सक्सेना, श्री अशोक मनवानी-भोपाल, श्रीमती सुधा गोस्वामी-जयपुर एवं श्री गोविंद पाल-भिलाई को दिव्य रजत अलंकरणों से नवाजा गया. संयोजक श्री जगदीश किंजल्क ने अपने स्वागत भाषण में यह घोषणा की कि यह वर्ष दिव्य जी का जन्म शताब्दी वर्ष है. इसमें दिव्य रजत अलंकरणों के लिए साहित्यिक पत्रिकाओं को भी शामिल किया जा रहा है. निर्णायक मंडल के श्री के.बी. शर्मा, पुलिस अधीक्षक लोकायुक्त, सागर, प्रो. कान्ति कुमार जैन, डॉ. आर.डी. मिश्र, डॉ. आनन्द प्रकाश त्रिपाठी, श्रीमती विजय लक्ष्मी विभा ने चयन के अपने अनोखे तरीकों की जानकारी दी. कार्यक्रम का संचालन श्रीमती रश्मि वर्मा एवं श्री राजेन्द्र नागर ने की. इस अवसर पर श्री अंशलाल पंद्रे की काव्य पुस्तक 'जय मॉ हे भारती' एवं डॉ० आनन्द प्रकाश त्रिपाठी द्वारा सम्पादित पत्रिका 'शब्द शिखर' के विशेषांक का लोकार्पण भी किया गया.

छायावादी कवयित्री तारा सिंह सम्मानित

साहित्यिक संस्था, रंजन कलश, भोपाल द्वारा १६ नवम्बर ०६ को हिन्दी भोपाल में आयोजित दशवें सम्मान समारोह में छायावादी कवयित्री डॉ० तारा सिंह को उनकी सामाजिक, साहित्यिक एवं सास्कृतिक क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान के लिए 'रंजन कलश शिव सम्मान, २००६' से अलंकृत किया गया. इस अवसर पर समारोह के अध्यक्ष, भोपाल दूरर्शन के निदेशक, श्री शशांक एवं रजन कलश के अध्यक्ष डॉ० सुशील गुरू ने डॉ. सिंह को भव्य प्रतीक चिन्ह, शाल, प्रशस्ति-पत्र एवं श्रीफल प्रदान कर सम्मानित किए.

इसके पूर्व डॉ० तारा सिंह को अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा विकास संगठन द्वारा 'राष्ट्रीय प्रतिभा सम्मान', विक्रमशिला हिन्दी विद्यापीठ द्वारा 'विद्या वाचस्पति, राष्ट्रीय राजभाषा पीठ, इलाहाबाद द्वारा भारती भूषण सम्मान प्रदान किया गया हैं. भारतीय साहित्यकार संसद, समस्तीपुर एवं विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान, इलाहाबाद हिन्दी साहित्य सेवा हेतु सर्वश्रेष्ठ मानदोपाधि 'विद्या वारिध' द्वारा अलंकृत करने जा रही है.

जापान के सर्वोच्च सम्मान को प्राप्त करने के बाद अपने उद्‌बोधन में:

डॉ० राज बुद्धिराजा की ओर से

आज का दिन मेरे जीवन के लिए एक अविस्मरणीय और ऐतिहासिक दिन है. जापान के सम्राट हिज़ मेजेस्टी द्वारा प्रदत्त अलंकरण 'दि ऑर्डर ऑफ दि सेकरेड ट्रइयर गोल्ड रेज़ विद नैक रिबन' को धारण करते हुए मैं गर्व और कृतज्ञता का अनुभव कर रही हूँ. हिज़ मेजस्टी सम्राट के प्रति मैं सादर अभिभूत आभार अर्पित करती हूँ कि जिन्होंने मुझ जैसे सहज सामान्य व्यक्ति का इस श्रेष्ठ अलंकरण के लिए चयन किया है. मैं जापान की सरकार और महामहिम जी के प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ. यह सम्मान पूर्व की संस्कृति का सम्मान है, भारतीय संस्कृति और हिन्दी के प्रति जापान में बढ़ती अभिरुचि का सम्मान है. वह दिन दूर नहीं जब जापान और भारत की सांस्कृतिक समरसता एक शांतिपूर्ण वैश्विक संस्कृति का निर्माण करेगी.

सूर्योदय के देश जापान के प्रति मेरे बालपन में ही एक चुम्बकीय आकर्षण था. वर्षो बाद जापान-दर्शन की अपनी कल्पनाओं में डूबी जब मैं तोक्यो विदेशी भाषा विश्वविद्याल में हिन्दी अध्यापन के लिए पहुंची तो एक और सुन्दर जापान मेरे स्वागत के लिए मेरे सामने था. मुझे लगा कि समृद्धि के शिखर छूता यह जापान अत्यन्त शान्त, संयत, सुन्दर, सौम्य और स्वाभिमानी है.

विश्वविद्यालय और विदेश मन्त्रालय की कक्षाओं में वाक्य-रचना का अभ्यास कराते हुए मुझे अपनी मेधावी शिष्यों की ऑखों में एक सुन्दर भारत की छवि दिखायी देती और वे मुझमें जापान ढूढने का प्रयास करते. एक-एक वर्ण, एक-एक शब्द जोड़-जोड़ कर जब वे हिन्दी बोलते तो उनके चेहरे खुशी से खिल उठते और मुझे संतोष-धन की प्राप्ति होती. गुरु-शिष्य परम्परा, भूमि-पूजन, शिलान्यास, गृह-प्रवेश, नामकरण और विद्याध्ययन संस्कारादि में मुझे जापान और भारत एक साथ दिखायी देते. मैं भारत का एक श्रेष्ठ रूप जापान को और जापान का एक श्रेष्ठ रूप जापान को सौपना चाहती थी.

पारम्परिक-परिधान किमोनो का सात्विक सौन्दर्य, शास्त्रीय बंदिशो में निबद्ध कोतो, श्यकुहाचि और श्यामिसेन की सुर-लहरियाँ, साकुरा और मोमिजी पर लिखें गये सुन्दर-सुन्दर गीत, तनाबता समा का प्रणय-गाथा आज भी मेरी स्मृतियों में रची-बसी हैं.

महामहिम जी, आपने मुझे एक गुरुत्तर दायित्व सौपा हैं. मैं अपने धर्म का पूर्णतः निर्वाह करूंगी. जापान और भारत के मेधावी शिष्यों के साथ एक ऐसे सांस्कृतिक सेतु का निर्माण करने का प्रयास करूंगी जिस पर जापान और भारत का जनमानस गलबइंया डाल आता-जाता रहेगा.

मैं एक बार फिर जापान के सम्राट हिज़ मेजस्टी के अखंड शासन, जापान के उज्ज्वल, समृद्ध, शांतिपूर्ण भविष्य की मंगल कामना करते हुए इस अलंकरण समारोह के अवसर पर आपको अपना हस्तलेख सौपती हूँ, महामहिम जी. इन्हीं शब्दों के साथ एक और कृतज्ञता, एक और आभार.

पाठको के संपादक के नाम पत्र

नववर्ष २००७

स्नेह-सिद्धि-समृद्धि-शौर्य दे, प्यार हर्ष दे
तमसाबृत पथ आलोकित हो शुभ विमर्श दे
ज्ञान सिक्त उल्लास पूर्ण कर दे यह जीवन
शक्ति नवल यश, कीर्ति विमल यह नया वर्ष दें.

अभिनन्दन

मुनीर बख्श 'आलम', चुर्क, सोनभद्र

++++++++++++++++++++++

नूतनवर्षाभिनन्दन

नव वर्ष मंगल मय हो
नित नवनीत सी खुशियां मिले
बगिया में नये नये फूल खिलें
स्नेह की सरिता बहे परस्पर
पथ आपका निष्कंटकमय हो।
पग धरों जहां जहां कहीं
सफलता चरण चूमें वहीं
निर्भय हो विचरण करो
तुम्हें तनिक न भय हो।
आओ; गाओ स्नेह सरस गीत
बन जाओ सबके मनमीत
नये साज की नयी तान हो
जीवन गीत की नयी लय हो

वंशी लाल पारस, भीलवाड़ा

++++++++++++++++++++

2007

पथ बाधा सारी हटे, सुगम हों काम
जीवन के रण में रहे, जीत आपके नाम
नूतन वर्ष की मंगलमय शुभकामनाओं के साथ............

रवीन्द्र रवि, कटनी, म.प्र.

++++++++++++++++++++

रिस्पेक्टेड डॉ. गोकुलेश्वर द्विवेदीजी एज द वीन्ड्स ऑफ सेलेब्रेशन वाफ्ट थ्रो द एअर, आई वीश ईट फिल्स योर लाइफ वीद प्लीजेंट इक्सपीरियेन्सेस, हैपीनेश एण्ड प्रासपर्टी

हैव एन एमेजिंग ईयर २००७

डॉ० श्रीमती तारा सिंह,
नवीं मुंबई

डॉ० राज की कुछ कविताएं

मेला

मेला देखने चलोगी?
मैं तो
मेले में ही रहती हूँ।

तुम कहॉ
मेले मे ता
मैं रहती हूँ।
गाती-गुनगुनाती
मुसकराती-खिलखिलाती
बात-बे-बात
बात में से बात निकालती हूँ
सचमुच के मेले में
रहती हूँ।
मै उस मित्र को
क्या बताऊं कि
बरसों पहले
अपना घर-द्वार छोड़
पंचतत्वी रथ पर सवार हो
खूबसूरत जग-मेला देखने
चली आयी थी।
उसे क्या बताऊं कि
पूर्व-जन्म भूल
कभी ठुमक-ठुमक चलती
कभी चांद-सितारों को मचलती
कभी परियों को बुलाती
और कभी
सपनों के गॉव निकल जाती थी।

उसे क्या बताऊं कि
कभी पांखुरी-पांखुरी गुलाब बन जाती
कभी मन के पन्नों पर
प्यारा-सा नाम लिखती
कभी झील-सी गहरी निगाहों में
डूब जाती थी
और कभी
चांद-सितारों में
खो जाती थी।
उसे क्या बताऊं कि
कभी संगी-साथियों को जाता देखती
कभी ढलती सांझ में
अपनी परछॉई देखती
कभी बिसाती उठाते बिखाती देखती
और कभी उतरती रात देख
कॉप-कॉप जाती थी।
न सही गाती-गुनगुनाती
मुसकराती-खिलखिलाती
बात-बे-बात
बात में से बात निकालती हूँ
मानो या न मानो
मेरे मित्र
मेले में तो
मैं ही रहती हूँ।
+++++++++++++++++++++

बेटी के जन्म पर

मैंने सुना कि
मेरे जन्म पर
बाबा ने बताशे बांटे थे
और
अम्मा ने
राई-नोन से
नज़र उतारी थी
गोवर से लिपे, पुते ऑगन में
एक नन्हा-सा गॉव
उमड़ आया था
जिसके लाड़-पगे-नेह पगे
आशीर्वादी स्पर्श ने
मुझे नहला दिया था।

और जब मैने
लिपी-पुती पटिया पर
सरकंडे की कलम से
'क' से 'कलम' लिखना शुरु किया
तो बाबा ने एक बार फिर
बताशे बॉटे थे
और अम्मा ने
नये-पुराने पटोलों में लिपटी गुड़िया
मेरे हाथों में थमा दी थी
बाहों के पालने में
उसे झुलाती, सुलाती
गुनगुनाती
होता है चिरकुटी काट जगाती
और नन्हीं-सी दुनिया में
न जाने कहॉ खो जाती थी।

गॉव भर को न्यौता गया था
गुड़िया के ब्याह पर
ननिहाल के भात से
ढोलक की थाप से
विदाई के गीतों से
एक बार फिर
गोबर से लिपा-पुता आंगन महक उठा था।
बरसों बाद
जब मैंने
बेटी के जन्म पर
शुद्ध देसी घी के मोतीचूरी लड्डू बांटे
तो गॉव तो पता नहीं कहॉ खो गया था
बड़े-बड़े शहर के लोगों ने
दबी-ढकी आवाज में कहा था
बौरा गयी है बेटी के जन्म पर लड्डू बांटती है।
इससे पहले कि कोई और
मुझे बौराया कहे
मैं एक बार फिर
सरकंडे की कलम
और लिपी-पुती पटिया में
पहुंच गयी थी।
बेटी के ब्याह पर
मित्रों की सलाह पर
जब मैंने शुद्ध हिंदी में
सब को न्यौता
तो किसी ने खुली
और किसी ने दबी जुबान से
मुझे बौराया कहा था
और मैं
बाबा के दूनों में
सरकंडे की कलम में
लिपी पुती पटिया में

डॉ० राज बुद्धिराजा के संस्मरण 'दिल्ली अतीत के झरोखे से' से साभार

कहाँ गये ये अनामन्त्रित मेहमान

पचास बरस पहले की बात है. दिल्ली की सड़कों पर ट्रिंन-ट्रिंन करती टनटनाती ट्राम दौड़ा करती थी. इटली और जापान की ट्रामों की तरह सब्ज़ी मंडी घंटाघर से लेकर चाँदनी चौक घंटाघर तक चलने वाली इस ट्राम योजना का भी अपना एक रुतबा हुआ करता था. लाहौरी-पिशौरी ताँगों और इक्के-दुक्के बनारसी इक्कों की दुनिया में अध न्नी-इकन्नी के बदले मुसाफ़िरों को मीलों तक यात्रा कराने वाली यह छोटी-मोटी रेलगाड़ी का काम करती थी. बीस हज़ारी मोटरों तक आम आदमी की पहुँच नहीं थी इसलिए लोग इसी में बैठकर, खड़े होकर और लटककर एक घंटाघर से दूसरे घंटाघर तक आया-जाया करते थे. सब्जी मंडी बर्फ़खाना, तीस हजारी, सदर बाजार, फ़तेहपुरी जैसे पड़ावों को छूकर ये ट्राम आगे बढ़ जाती थी.

इन दोनों घंटाघरों का अपना-अपना व्यक्तित्व था. समय बताने के अलावा एक घंटाघर सोहन गंज, शोरा कोठी, माल रोड, मोंटा की छोटी-बड़ी पहाड़ियों के वानर-वृन्द से दोस्ती किये रहता और दूसरा एकान्तप्रिय टाउन हॉल, हार्डिग लायब्रेरी के विशाल, साफ़-सुथरे बाग-बगीचों का साक्षी बना रहता. यदि होता तो श्वेत-नील कपोतों का झुंड धरती पर उतर दाना चुग आकाश की ओर पंख फैला लेता.

आगरा के सदर की तरह यहॉ के सदर बाजार की भी अपनी एक अदा थी पर फतेहपुरी के मसालों और परॉठेवाली गली के भरवॉ परॉठों की महक सात समुन्दर पार पहुँच चुकी थी. लोग दूर-दूर से आते और पुरानी दिल्ली की पुरानी अदा को देखकर विभोर हो उठते. किनारी बाजार, मोती बाजार और दरीबा कलॉ. किनारी बाजार की चमक-दमक किसी-न-किसी रुप में आज भी बनी हुई है, पर मोती बाजार के आबदार मोती न जाने कौन-सी समुद्री तलहटी में चले गये हैं.

दरीबा कलॉ के सोने-चॉदी की नवरत्नी कला से सभी परिचित है, पर बहुत कम लोग जानते होंगे कि रीतिकाल के

> जरूरी नही कि मेहमान इनसान ही हों. यहॉ के ऐश्वर्य का एक जरुरी हिस्सा था वानर समूह.

प्रसिद्ध कवि देव की ससुराल दरीबा कलॉ में थी. यही कारण है कि उनके काव्य में रत्नजड़ित आभूषणों का चमचमाता ऐश्वर्य बिखरा पड़ा है. वे भी सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला की तरह कभी-न-कभी ससुराल जरूर आते होंगे और सलहजों की नेह की गठरी बॉध लौट जाते होंगे.

मिर्ज़ा ग़ालिब ने जिस दिल्ली की दास्तॉ कही है यह वही दिल्ली है, वहीं चॉदनी चौक है जिसके दोनों ओर के छायादार वृक्ष, चहचहाते पक्षियों का रैन-बसेरा बनकर तापमान कम किये रहते थे. जब लाल किले से चॉदनी चौक तक जाने वाले रास्ते पर यमुना नदी बहती हो और लोग चॉदनी चौक तक जाने वाले रास्ते पर यमुना नदी बहती हो और लोग चॉदनी रातों में नावों द्वारा आते-जाते हों भला उस दिल्ली में कोई फटेहाल कैसे रह सकता है? दिल्ली की अपनी एक संस्कृति, रहन-सहन, परम्परा और दबा-ढका लाजभरा सौन्दर्य हुआ करता था. व्यक्ति जैसा बाहर से दिखता था, भीतर से वह वैसा ही होता था. हर तरह के दिखावे और छल-कपट से कोसो दूर. भोर-सॉझ के सितारों और सूरज-चॉद की किरणों की तरह मेहमान-मेज़बान का एक रिश्ता हुआ करता था. दोनों ही मीठी-मीठी यादों से भीगे रहते थे. जरूरी नहीं कि मेहमान इनसान ही हों. यहॉ के ऐश्वर्य का एक जरुरी हिस्सा था वानर समूह. तब न पेड़ की कटने-काटने की बात होती थी और न वानरों को विदेश बेचने की बात होती थी. ये वानर टीन की छतों पर उछल-कूद करते, मुँडेर पर आ बैठते, मौका मिलने पर रसोई से खाने-पीने का सामान झपटते और चीं-चीं कर अपने बन्धु-बान्धवों को बुला लाते. मेज़बान-मेहमान दोनों ऑखें तरेरते, एक-दूसरे को धमकाते, भोजन खत्म होने पर दोनों ही अनंदित होते. आज भी गृहिणियॉ इन अनामंत्रित मेहमानों के आने का इन्तज़ार करती है, उनके लिए खाना पकाती हैं.

यह बात तब की है जब कपड़ा राशन पर मिला करता था. मारकीन एक रुपया गज़, लट्ठा-पॉपलीन डेढ़ रुपये गज. रुपये तोला चॉदी और अस्सी रुपये तोला सोने की चाल के साथ-साथ चला करता था अनाज और गेहूँ, साग-सब्जी का भाव.

आज भले ही यहॉ के फव्वारे का जल सूख गया हो, प्रधानमंत्री, गृहमंत्री गॉधी ग्राउंड की रामलीला देखने न आते हो, नयी सड़क दुर्लभ पुस्तकें उपलब्ध न कराती हो, सूजी के हलवे के साथ घी में तैरते कत्तलम्मे न मिल पाते हों, पर दिल्ली की जलेबी और चाट-पकौड़ी आज भी अतिथियों को निमन्त्रित करती हैं.

डॉ० राज बुद्धिराजा के कहानी संग्रह 'कितना गहरा पानी' से साभार

जल समाधि

जब-जब भी मैं गढ़-गंगा की तरफ जाती हूं तो मुझे ऐसे व्यक्ति की याद आ जाती है जिसे लोग 'भगत जी' कहा करते थे. वे मुंह-अंधेरे उठते, अष्टाध्यायी के सूक्त याद करते, पास-पड़ोस के बच्चों को संस्कृत पढ़ाते, भिक्षावृत्ति करते और अपने परिवार का पेट भरते. वैसे भगत जी का गढ़ गंगा से रिश्ता बहुत बाद में जुड़ा. गंगा की लहरें उन्हें लील गई थी.

बात बहुत पुरानी है. मेरे पड़ोसवासी बाबू जी सवेरे-शाम कीर्तन करते समय आसपास को बुलाते और करताल हाथ में लेकर नाचा करते. उनकी बैठक लोगों से भर जाती लेकिन मैंने कभी इस बैठक में झांका तक नहीं. दूध लेकर लौटते समय एक दिन उन्होंने मुझसे कहा कि हमारे यहां कल भगत जी आने वाले हैं तुम जरुर आना. उनकी उम्र का लिहाज़ करते हुए जब मैं उनके यहां गई तो एक प्रौढ़ व्यक्ति शीतल पाटी पर आलथी-पालथी लगाए बैठे थे. घुटने तक सफेद धोती, आधी बाहों वाली बण्डी, मोटे शीशों वाला चश्मा और आधा इंची बाल मुझे आज भी याद हैं. बाबू जी भक्ति-भाव से उन्हें खाना खिलाने लगे और मैं उठकर अपने घर आ गई. बाबू जी रोज़ सवेरे मुझे रोक लेते और मुझे भगत जी के बारे में बताते कि उनकी पत्नी बहुत सीधी है. उनका बेटा भी गऊ है. जो मिल जाता है वही खा लेता है. कभी बताते कि उनका बेटा आवारा हो गया है. कहता है कि ये पन्ना-पोथी छोड़ों और नौकरी कर लो. रोज़-रोज़ मुझे भीख मत खिलाया करो. मैं कहती-'ठीक ही तो कहता है.'

फिर कुछ दिन बाद बाबूजी ने मुझसे कहा कि भगत जी का बेटा बागी हो गया है. बम्बई भाग गया है. कहता है फिल्मों में काम करूंगा. मैंने फिर कहा-"निखट्टू की औलाद ऐसी ही होती है."

"राम, राम" भगत जी को निखट्टू कहती है.

"हां, बाबूजी. जो आदमी कमा नहीं सकता. अपनी बीबी के लिए सूती धोती तक ला नहीं सकता वो निखट्टू नहीं तो और क्या है."

इस बार बाबू जी चुपचाप अपने घर चले गए. कुछ दिनों के लिए मैं दिल्ली से बाहर चली गई. लौटने पर बाबू जी ने बताया कि भगत जी बहुत दुःखी हैं. उनकी बीबी ने भी बगावत कर दी है. कहती है मैं दूसरी शादी करूंगी. मैंने रटा-रटाया वाक्य कहा दिया "ठीक ही तो कहती है.", अंगारे उगलते हुए बाबू जी अपने घर चले गये.

एक दिन बाबूजी ने बहुत प्यार से मुझे अपने घर बुलाया. आगरे का पेठा और दोल-मोट खिलाई. फिर अंदर जाकर पीतल की एक झांझर उठा लाए.

"किसके दहेज में देनी है, बाबूजी." मैने कहा.

"दहेज में देने के लिए नहीं, बजाने के लिए लाया हूँ." और उनकी उंगलियों की थाप से झांझर बज उठी. वे बोले "भगतजी जल-समाधि लेने वाले है. हम सब उनके चेले उनके पीछे गाते-बजाते जाएंगे. गढ़-गंगा जाएंगे हम सब. अगले हफ्ते." मैं चौक उठी."क्या कहा, जल समाधि. उन्हें चुल्लू भर नहीं मिला क्या? इतनी बड़ी नदी को अपवित्र करेंगें. यह जल-समाधि नहीं आत्महत्या है. मैं अभी पुलिस को फोन करती हूँ." वे रोए, गिड़गिड़ाए कि मैं वहां संगत में नहीं जाऊंगा. तुम पुलिस को फोन मत करो. मैं निश्चिंत होकर घर लौट आई. इस बात को कई दिन गुजर चुके थे.

एक दिन बाबूजी मेरे घर आ धमके. बोले "तुम ठीक कहती थी कि वह आत्महत्या है." वे बहुत देर तक मुझसे बात करते रहे जिसका मतलब यह था भगत जी ने एक सेर पेठा खरीदा और गढ़ गंगा की ओर बढ़ चले. उनके पीछे भगत जी की जय कहते हुए चेले-चपाटे भी लहरों में उतर गये. भगत जी ने बताया कि मैं एक-एक टुकड़ा पेठा डालता जाऊंगा, मछलियां आती जाएगी और फिर वे मुझे खा लेंगी. मैं दस साल के बाद फलां आदमी के यहां फिर से जन्म लूंगा और तुम सबसे एक बार मिलूंगा. तुम चिंता मत करना.

मुझे काटो तो खून नहीं. आखिरकार उस प्रपंची ने आत्महत्या कर ही ली. मैं गहरी सोच में डूब गई. पूर्वजन्म और पूवर्जन्म का बहाना करके उस निखट्टू ने चेले-चपाटों को मूर्ख बनाया और गढ़ गंगा को अपवित्र कर दिया. रोज़ी-रोटी के लिए जब मैं लंबे अर्से तक विदेश में रहकर लौटी तो मुझे लेने के लिए बाबू जी हवाई अड्डे आए और बोले कि बेटी पन्द्रह साल हो गए उस धोखेबाज ने अब तक जन्म नहीं लिया. जिसके यहां जन्म लेना था उसकी पत्नी स्वर्गवासी हो गई. मै हवाई अड्डे से लेकर घर तक के पूरे में मौनी बाबा बनी रही. और एक बार मैं गढ़ गंगा की तरफ गई. यही वो गंगा है जहां उस प्रपंची ने "जल-समाधि" ली थी.

प्रिय भैया/बहिनों

आप लोगों को कहानी पढ़ना व सुनना तो अच्छा लगता ही होगा. इस बार मैं राज दादी जी की कहानी दे रही हूँ. यह कहानी आप लोगों को पसंद आये तो अपनी बहन को जरुर लिखना.

आपकी बहन
संस्कृति 'गोकुल'

गुड़ियों वाला महल

डॉ0 राज बुद्धिराजा

एक था राजा. उसका था बहुत सुन्दर महल. महल में थे सुन्दर-सुन्दर बगीचे, रंग-बिरंगी रौशनियों में मचलते ठंडे पानी के फव्वारें, कुछ छोटे तालाब और तालाब के किनारे कचनार के पेड़.

इस महल की चर्चा दूर-दूर तक फैली हुई थी. पूरे महल में सोने-चॉदी की चमक-दमक थी. पूरा ठाठ बाट. महल है तो ठाठ-बाट भी होगा ही. खिड़कियों, दरवाजों पर सोने-चॉदी से मढ़े मखमली पर्दे झूलते रहते और खुश होते. फर्श पर बिछे रंग-बिरगें कालीन असली फूलों से लगते. छत पर टंगे झाड़फानूस, हीरे, जवाहरात से जड़े पलंगो को रोशनी से भर देते. दास-दासियों की कतार की कतार हाथों में शमादान थामें रहती. परी जैसी महारानी जहॉ-जहॉ जाती वहॉ-वहॉ फूल बिछ जाते. महल के दरवाजे पर बड़ा सा घंटा टंगा रहता. प्रजा में से किसी को कोई दुःख होता तो वह उसे बजाता. राजा उसकी कहॉनी ध्यान से सुनता, उसका दुःख दूर करता था. इस तरह उस महल की कहॉनी दूर-दूर तक फैली हुई थी.

मगर राजा था कि इससे भी ज्यादा सुन्दर महल बनवाना चाहता था. लकड़ी का ऐसा महल जो अब तक कहीं भी नहीं बना था. उसकी कल्पना के महल के नमूने तैयार किये जाने लगे. दूर-दूर से कारीगरों को बुलवाया गया. मगर कोई भी कारीगर इतने कम समय में इतना सुंदर महल तैयार नहीं कर सकता था. राजा की चिंता का ठिकाना नहीं रहा. जैसे-जैसे दिन बीतने लगे, राजा की चिन्ता भी बढ़ने लगी. वह एक यादगार महल बनवाना चाहता था.

एक दिन की बात है. खाने के बाद जब वह आराम कर रहा था तो उसे ऊँघ आ गई. उसने देखा कि आसमान से एक देवदूत धीरे-धीरे धरती पर उतर रहा हैं. उसे लगा कि वह उसकी तरफ बढ़ रहा है. महल के सभी दरवाजों को पार करता हुआ वह उसकी ओर आकर बोला-'राजन! तुम्हें चिन्ता किस बात की है? जैसा तुम चाहते हो, तुम्हारे लिए मैं वैसा ही महल तैयार करूँगा.' देवदूत ने उसे धीरे से छुआ. आँख खोलने पर राजा ने देखा कि उसके आस-पास कोई भी नहीं हैं. राजा को बहुत हैरानी हुई. उसने उस देवदूत को अपनी आँखों से बिल्कुल साफ़-साफ़ देखा था. पता नहीं उसे छूकर वह कहाँ चला गया? वह हर समय उस देवदूत के बारे में ही सोचने लगा.

तीन-चार दिन के बाद एक बढ़ई राजा के दरबार में आया. उसके कंधे पर झूलते झोले में दो-चार औजार थे. उसने राजा से कहा कि वह लकड़ी का महल अकेले ही तैयार कर सकता है. राजा को कुछ समझ में नहीं आया. इतना बड़ा

महल एक आदमी कैसे तैयार कर सकता है? बढ़ई था कि काम करने पर तुला था. उसने बहुत विनम्रता से राजा से कहा–'राजन! आप मेरी बात का विश्वास कीजिए. महल एक महीने में तैयार हो जाएगा. पर मेरी एक शर्त है.'

महल के लिए एक नहीं, सौ शर्ते मानने को राजा तैयार था. 'वह कौन–सी?' राजा ने पूछा. 'मैं रात–दिन काम करता रहूंगा. जब तक महल तैयार न हो जाए किसी भी व्यक्ति को उस तरफ आने की इज़ाज़त न दी जाए'–बढ़ई बोला.

'यह कौन–सी बड़ी बात है.' और राजा ने भी सभी को उस तरफ़ जाने से मना कर दिया, जिधर वह महल बनने वाला था.

गणेश जी की पूजा के बाद महल बनाने का काम शुरु किया गया. रात–दिन आरियों, हथौड़ियों की तरह–तरह की आवाजें सुनाई पड़ने लगी. ऐसा लगता था कि एक हजार से ज्यादा बढ़ई काम कर रहे हैं.

महल तेजी से आकाश की ओर बढ़ने लगा. सभी यही सोचते थे कि एक आदमी इतना काम कैसे कर सकता है? उधर झाँकना तो दूर, उधर कोई जा भी कैसे सकता है? क्योंकि राजमहल के सभी कर्मचारियों ने उधर न जाने का वादा कर रखा था.

राजा नये महल के सपने देखता और चुपचाप खिड़की से देखता रहता कि राजा का लकड़ी का वह महल रोशनियों से जगमगा उठता है. वह बहुत खुश होता कि उसका सपना पूरा होने वाला है. वह चाहता था कि कम से कम एक बार महल की ओर चुपचाप जाकर वह देखें कि वहॉ क्या हो रहा है, पर किसी अनहोनी के डर से वह देखने की हिम्मत नहीं जुटा पाता था.

पर मन ही तो है. राजा का हो या प्रजा का. राजा अपने मन पर काबू नहीं रख पा रहा था. एक रात वह चुपके से दबे पॉव लकड़ी के महल की ओर गया. उसने शीशे झाँक कर देखा कि वही बढ़ई अकेला काम कर रहा है. वह जैसे गया था वैसे ही दबे पांव लौट आया. उसे बहुत हैरानी हुई कि एक आदमी की मेहनत इतना रंग ला सकती है.

यही सोचते–सोचते राजा गहरी नींद में चला गया. अगली सुबह उठते ही उसे लगा कि आरा–हथौड़ी की आवाज बंद हो गई है. वह गिरते–पड़ते महल की ओर गया. उसने एक बार फिर शीशे की खिड़की से झांक कर देखा तो बढ़ई का कहीं अता–पता नहीं था. पूरे महल में लकड़ी की सुंदर–सुंदर रंग–बिरंगी गुड़िया बिखरी पड़ी थी.

उदास मन से जब वह लौटने लगा तो उसे आवाज सुनाई पड़ी–'राजन! तुमने एक महीने के लिए भी सब्र नहीं किया. तुमने अपना वचन न निभाकर मेरा अपमान किया है. लेकिन मैं तुम्हारा अपमान नहीं करुँगा. इन खूबसूरत गुड़ियों को देखने के लिए काबुल, कंधार से लोग आया करेगें.

वह दिन और आज का दिन! गुड़ियों वाला महल खचाखज भरा रहता है.

++++++++++++++++++

डॉ० राज बुद्धिराजा के 'अभी-अभी साकुरा खिला है' संकलन से साभार

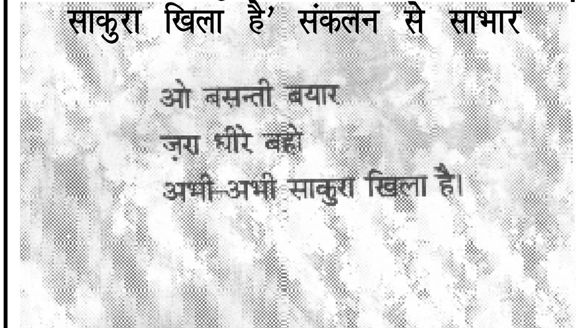

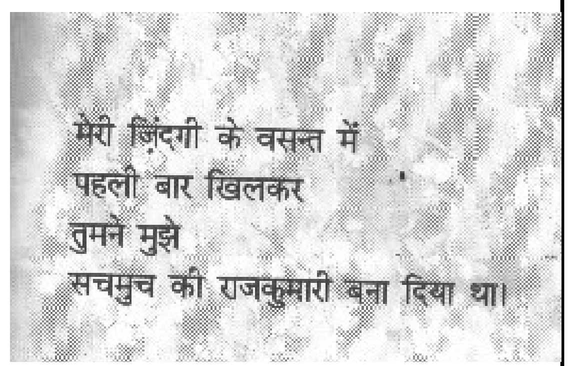

संस्मरण

<u>संस्मरण</u>

संस्मरण

संस्मरण

संस्मरण

चित्र

चित्र

चित्र

चित्र

लघु कथा

हवस

खाकी बाबू रिटायर होने के दो साल के अन्दर ही चल बसे ढेर सारी जमीन जायदाद ढेर सारा रुपया और भरापूरा घर परिवार छोड़कर. खाकी बाबू को चार सन्तानें थी तीन बेटा और एक बेटी पर खाकी बाबू बेटी के साथ कभी न्याय नहीं किये. हॉं उसका सामाजिक और नैतिक कत्ल कई बार खाकी बाबू कर चुके थे. खाकी बाबू को चौबीसों घंटे बेटो को राजा बना देने की मृगतृष्णा की हवस चढ़ी रहती. पहली पत्नी के मौत का गम थोड़ा उन्हें था. इस गम को कम करने के लिए वे दूसरा ब्याह भी कर लिये थे दो साल पहले ही. दूसरी पत्नी की वजह से उनके बेटे बहुओं में असन्तोष था. बेटी तो परायी ही थी वह भी दूर जाकर बस चुकी थी साल छः माह में जाकर बाप के दुख दर्द को बांटने से भी नहीं चूकती थी. खाकी बाबू मानसिक द्वन्दों और कुण्ठाओं से जूझते हुए दिन सदा के लिए शान्त हो गये. बस कोई गर्माहट थी तो वह उनके द्वारा छोड़ी गयी जमीन जायदाद और ढेर सारी रकम के बंटवारे को लेकर. चूंकि रकम ज्यादा थी और बैंक में भी. इसलिए मामले का हलाभला कोर्ट से ही होने वाला था और वही हुआ. तीनों लड़कों और दूसरी पत्नी को वारिस माना गया और एकमात्र लड़की का कानूनन कत्ल कर दिया गया. यह कह कर कि खाकी बाबू को कोड़ी लड़की नहीं हैं. हां इस कत्ल को कोर्ट ने भी सही साबित कर दिया अपनी मुहर लगा कर सिर्फ रकम की हवस की खातिर.

नन्दलाल भारती, इंदौर, म.प्र

++++++++++++++++++++++

सहयोगी पत्रिकाएं

प्रगतिशील राष्ट्रीय साप्ताहिक

जनप्रवाह

सम्पादकः **डॉ० मधुरानी सिंह राठौर**
इंगले की गोठ, लश्कर, ग्वालियर-१, म.प्र.

+++++++++++++++++++++

वैचारिक क्रान्ति का संदेशवाहक

अयोध्या संवाद

संपादकः **शरद शर्मा**
हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र
कारसेवकपुरम् जानकीघाट, अयोध्या, पिन-२२४१२३, उ०प्र०

++++++++++++++++++++++

कर्मनिष्ठा मासिक

संपादकः **डॉ. मोहन तिवारी** 'आनन्द'
म.प्र. तुलसी साहित्य अकादमी
सुन्दरम् बंगला, ५०, महाबली नगर कोलार रोड, भोपाल, म.प्र.

+++++++++++++++++++++

हिन्दी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा.लि.

संपा.: श्री विजय प्रकाश बेरी
सी.२१/३०, पिशाचमोचन, वाराणसी-२२१०१०

साहित्यकार कल्याण परिषद
संपादकः श्री रामचन्द्र शुक्ल
अवन्तिका, निकट हाथी पार्क, रायबरेली, उ.प्र.

++++++++++++++++++++

शबरी शिक्षा समाचार,

संपा0ःश्री एम.वेकेंटश्वरण,
ए.ओ. १६७, सेकण्ड अग्रहारण, सलेम-६३६००१

++++++++++++++++++++

मा0लोकयज्ञ

सं0ःप्रा. सोनवणे राजेन्द्र 'अक्षत'
सिन्धुपुष्प, प्राध्यापक कॉलोनी, आदर्शनगर, पांगरीरोड,बीड, ४३११२२, महाराष्ट

++++++++++++++++++++

राष्ट्रभाषा मासिक

प्र.सं0ः श्री अनन्त राम त्रिपाठी
वर्धा 442003

++++++++++++++++++

दिव्ययुग मासिक

प्र.सं.ः प्रा. जगदीश दुर्गेश जोशी
द्वारा आचार्य डॉ. संजय देव, 90 बैंक कॉलोनी, अन्नपुर्णा मार्ग, इन्दौर–452009, म.प्र.

लेखन प्रतियोगिता नं० १

इस प्रतियोगिता में रचनाकार को दिये गये शब्द पर एक कविता लिखकर भेजनी होगी. प्रथम, द्वितीय व तृतीय पुरस्कार पाने वाले रचनाकारों की रचनाओं को प्रकाशित किया जाएगा. यह प्रतियोगिता १२ वर्ष से ३५ वर्ष तक के उम्र के साहित्यकारों के लिए ही होगी. प्रथम पुरस्कार विश्व स्नेह समाज की त्रैवार्षिक, द्वितीय पुरस्कार वाले को द्विवार्षिक व तृतीय पुरस्कार पाने वाले को वार्षिक सदस्यता प्रदान की जाएगी. साथ ही प्रमाण पत्र भी दिया जाएगा.

नियम एवं शर्तेंः १. एक शब्द पर एक रचनाकार की एक ही रचना स्वीकार की जाएगी. २.रचनाकार को अपनी रचना कें साथ मोलिकता प्रमाणित करनी होगी. ३.रचना संबंधित विवाद पर रचानाकार स्वयं जिम्मेदार होगा. ४. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम एवं सर्वमान्य होगा.५. किसी भी प्रकार के विवाद के संदर्भ मे न्यायालीय क्षेत्र इलाहाबाद होगा. ७. रचना के साथ जबाबी टिकट लगा लिफाफा लगाना न भूलें. ८. प्रविष्टि के साथ कूपन होना अनिवार्य हैं. कूपन की फोटो स्टेट प्रति स्वीकार्य नहीं होगी.

शब्दः नेताजी लिखें-संपादक, विश्व स्नेह समाज,
ईनामी प्रतियोगिता न०१, एल.आई.जी.-६३, नीम सरॉ कॉलोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद

दिसम्बर अंक में श्री बी.एल.मीणाजी का लेख 'कामयाबी और नाकामयाबी' बहुत प्रेरणास्पद रहा. कौशलेन्द्र पाण्डेय की लघुकथा 'निष्काम' मानवीय संवदेना को उकेरती एक सशक्त रचना है. संतकवि ॐ पारदर्शी जी की काव्य-रचना, डॉ० अली अब्बास 'उम्मीद' की ग़ज़ल बहुत अच्छी लगी. जनवरी ०७ में श्री गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी जी का लेख 'को कहि सकई प्रयाग प्रभाउ' बहुत जानकारी पूर्ण रहा. डॉ० श्याम मनोहर व्यास की लघु कथा 'सौदा' तथाकथित सभ्य व प्रगतिशील समाज की नग्न सच्चाई को उजागर करती सशक्त रचना है. श्री तेजराम शर्मा जी की कविता 'अर्पणा', श्री श्याम भंवर जी की कविता 'स्नेह प्यार' से अच्छी लगी. विश्व स्नेह समाज निरन्तर प्रगति-पथ पर अग्रसर रहे, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ. श्रेष्ठ संपादन हेतु हार्दिक बधाई स्वीकार करें.

राजीव कुमार'हिन्दी पुत्र', बरेली, उ०प्र०

विश्व स्नेह समाज का वर्ष ६, अंक २ हस्तगत हुआ. सात्विकता सम्पन्न इस अंक से स्पष्ट है कि इस पत्रिका को अब तक प्रचुर लोकप्रियता मिल चुकी है. चेन्नई, अहमदाबाद, नालन्दा, खगरिया, मुंबई, पटना, दिल्ली, विदिशा, लखनऊ, छत्तीसगढ़ यानिकि सम्पूर्ण भारत के पाठकों में यह चर्चित है. 'निकम्मा साहित्य लिखने वालों को ऊंचा दर्जा दिया जा रहा है.' शीर्षकीय लेख उत्तम है, श्री घनश्याम दास गुप्ता का आलेख भी बढ़िया है, नियमित लेखक है. आपने अपने सम्पादकीय के माध्यम से बेरोजगार भाइयों को सुदृष्टि प्रदान की है, कृपया मेरा साधुवाद स्वीकारें.

डॉ० कौशलेन्द्र पाण्डेय, लखनऊ

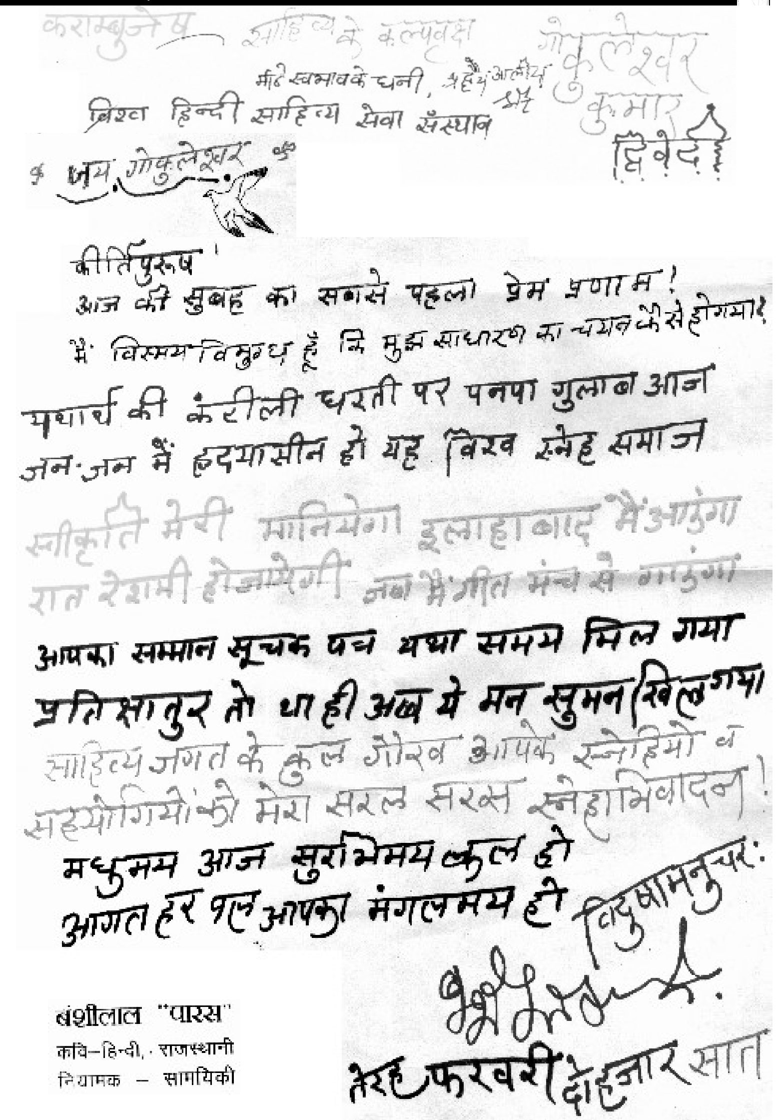

कराम्बुजेषु — साहित्य के कल्पवृक्ष
मीठे स्वभाव के धनी, श्रद्धेय आत्मीय श्री गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी
विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान
जय गोकुलेश्वर

कीर्तिपुरुष!
आज की सुबह का सबसे पहला प्रेम प्रणाम!
मैं विस्मय विमुग्ध हूँ कि मुझ साधारण का चयन कैसे हो गया!

यथार्थ की कंटीली धरती पर पनपा गुलाब आज
जन-जन में हृदयासीन हो यह विश्व स्नेह समाज
स्वीकृति मेरी मानियेगा इलाहाबाद मैं आऊंगा
रात रेशमी हो जायेगी जब मैं गीत मंच से गाऊंगा
आपका सम्मान सूचक पत्र यथा समय मिल गया
प्रतिक्षातुर तो था ही अब ये मन सुमन खिल गया।
साहित्य जगत के कुल गौरव आपके स्नेहियों व
सहयोगियों को मेरा सरल सरस स्नेहाभिवादन!
मधुमय आज सुरभिमय कल हो
आगत हर पल आपका मंगलमय हो

विदुषामनुचरः
[signature]
तेरह फरवरी दो हजार सात

बंशीलाल "पारस"
कवि–हिन्दी, राजस्थानी
नियामक – सामयिकी

आपकी अत्यंत सस्ती, सरल एवं सर्व समाहित पत्रिका 'विश्व स्नेह समाज' का दिसम्बर अंक प्राप्त हुआ. पत्रिका के सफलता के छः वर्ष होने पर आपको सफल संपादन के लिए हार्दिक बधाई. अपनी बात के माध्यम से जिस सम्पादकीय अश को आपने रेखांकित किया है वह अत्यंत सराहनीय, संग्रहणीय एवं तथ्यपरक है. शासन द्वारा बेरोजगारों को भत्ता देने पर जिस बेबाक तर्कपूर्ण एवं गणनात्मक विश्लेषण का परिचय दिया है वह श्रेष्ठ सम्पादक ही कर सकता है. कैरियर, स्वास्थ्य, जानकारी, व्यंग्य, ज्योतिष एवं अध्यात्म समेत अनेक विषयों पर लिखे गये लेख अत्यंत रोचक एवं ज्ञानवर्धक लगे.

ईश्वर शरण शुक्ल, इलाहाबाद

आपकी यशस्वी पत्रिका का अंक मिला. इस अंक में विविध प्रकार की सामग्रियों का संयोजन पत्रिका को पठनीय तथा उपयोगी बना देता है. संपादन कला पर प्रचुर सामग्री नये संपादकों का मार्ग दर्शन करेगी. स्वर्ण किरण जी का लेख उपयोगी तथा मार्गदर्शक है. समाज के हर वर्ग के लिए कुछ न कुछ है. कागज तथा मुद्रण पर ध्यान देने की आवश्यकता है. वर्तमान कलेवर में भी सामग्रियों की बहुलता से इसके पढ़ने का आकर्षण बना हुआ है. आप साधुवाद के पात्र हैं.

डॉ० राजेश्वरी शांडिल्य, संपादक, भोजपुरी मासिक, लखनऊ

जरूरी है बातचीत में साफगोई

एक दूसरे की बातचीत में छुपा हुआ संदेश साफ पढ़ पाना ही बातचीत का प्रभावशाली तरीका हैं. स्पष्ट तरीके से हम अपने संदेश दूसरे तक पहुंचा सके व दूसरे तक पहुंचा सके व दूसरे का संदेश समझ सकें, इसके लिए कुछ बातों पर ध्यान देना जरुरी हो जाता है-

आपसे जो व्यक्ति बात कर रहा है, उसकी आवाज में आने वाली ध्वनि पर ध्यान दें. बातचीत के सही अर्थ को समझने के लिए टोन या लहजे से बेहतर कुछ नहीं हैं. दो अलग लहजे में कहे गए एक ही शब्द के अर्थ अलग होंगें.

कहे जा रहे शब्दों के अलावा कुछ और भी सुनने की कोशिश करें. बातचीत के दौरान दूसरा व्यक्ति कितनी जगह चुप्पी लगाता हैं, कितनी जगह कुछ कहने में हिचकिचा रहा हैं आदि संकेत, किसी संदेश का सही अर्थ समझने के लिए बहुत महत्वपूर्ण होते हैं.

संदेश भेजने या समझाने में समय का बहुत महत्व हैं. सही मौके पर कही गई बात का सही असर होता हैं. यह बात न सिर्फ दो व्यक्तियों के सामान्य संबंधों पर लागू होती हैं बल्कि मालिक-सेवक, पति-पत्नी, मित्र आदि किसी के भी संबंध पर लागू होती हैं.

अगर सही संदेश पहुंचाना है तो बेहतर होता है कि बातचीत में गोपनीयता न बरतें. गलतफहमी का सबसे बड़ा कारण होता हैं पारदर्शिता में कमी. जैसे किसी पारदर्शी चीज के आर-पार सब दिखाई देता हैं. उसी प्रकार आपकी बातचीत या संदेश का उद्देश्य व उसकी विषयवस्तु आदि की जानकारी यदि सभी को होगी तो तथ्यों को कोई तोड़ मरोड़कर नहीं पेश कर पाएगा. इस व्यवहार से एकता की भावना भी उत्पन्न होती हैं. किसी भी संबंध के लिए यह अपनेपन का भाव बहुत आवश्यक हैं.

संदेश या बातचीत से आप दूसरों से मिलकर अपने लक्ष्यों को बांट सकते हैं. संदेश या बातचीत इतनी स्पष्ट हो कि लोग उसको समझकर आपसे सहमत हों, और लक्ष्य पाने में आपका हाथ बंटा सकें.

हमारी भाव भंगिमा या 'बॉडी लैंग्वेज' की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं. किसी भी बातचीत की शुरुआत में यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि बातचीत के दौरान हमें किस प्रकार के हाव-भाव दिखाने हैं. उदाहरण के लिए औपचारिक बातचीत जैसे कि साक्षात्कार में टीवी चैनेल के वीजे की भांति हाथ चलाकर बात करना ठीक नहीं माना जाता हैं. लेकिन वीजे के मान में हम साक्षात्कार देने जैसा वातावरण नहीं बना सकते. इससे मनोरंजन का उद्देश्य पूरा नहीं हो पाएगा.

दूसरे की बात को सुनना भी बहुत आवश्यक हैं. प्रभावशाली ढंग से बातचीत या संदेश देने के लिए आपको सुनने की आदत भी सीखनी होगी. यदि हम ध्यान से सुनेंगे नहीं तो दूसरे के संदेश को सही ढंग से समझ भी नहीं पाएंगें. नतीजा यह होगा कि संदेश में कही गई बात के लिए हम जो भी करेंगें, उसकी दिशा गलत भी हो सकती हैं.

कम्युनिकेशन या बातचीत केवल दो लोगों के लिए ही आवश्यक नहीं होती बल्कि संगठन के लिए महत्वपूर्ण होती हैं. यदि हमें अपनी बात को अर्थपूर्ण व प्रभावशाली ढंग से कहना हैं तो उसे अधिकार के साथ स्पष्ट तरीके से कहना ही बातचीत के उद्देश्य को पूरा करेगा. ❍

१.तत्व की पूजा करों

सत्य की पूजा करों
माटी का भगवान छोड़
अपनी पूजा करों।

२. 'संतो' की होती रोज दिवाली
हल्दी कुंकूं
भक्तों की होती रोज दिवाली
हल्दी कुंकूं
और साल में, एक बार ही आतीं
दुनिया वालों की दिवाली
हल्दी कुंकूं
आओ भक्ति में डूबे,
ज्ञान में डूबे,
ध्यान में डूबे
और रोज मनाएं दिवाली
हल्दी कुंकूं

किशन कुमार अग्रवाल, महराष्ट्र

(हल्दी कुंकूं, मंकर संक्राति के अवसर पर मनाये जाना वाला एक पर्व हैं)

अपील

स्नेहालय (वृद्धाश्रम एवं अनाथाश्रम) में सहयोग करें.

विस्तृत जानकारी के लिए लिखें:

पी.एस.दूबे, ग्राम-टीकर, पो. टीकर, जनपद-देवरिया

मो. ९३३५१५५९४९, Email:gpfsociety@rediffmail.com

अब तो ठंढी हो चली जीवन कर राख

डॉ० श्रीमती तारा सिंह की उपरोक्त कविता संग्रह मुझे अवलोकनार्थ प्राप्त हुआ है, जिसे मैं अपना सौभाग्य ही मानता हूँ. भिन्न-भिन्न प्रान्तों से हिन्दी साहित्य की महान सेवाओं के फलस्वरुप चालीस उच्चतर

स्वान्तः सुखाय की अनुभूति जब विश्व कल्याण की धरोहर बन जाती हैं, तब स्वप्न द्रष्टा अपने विचारों को साकार स्वरूप प्रदान करता हैं. 'मधुशाला की मधुबाला' के माध्यम से कवि ने अपने विचारों को जनमानस तक पहुंचाने में कितनी सफलता हासिल की है यह तो पाठकों के हृदय पटल पर पड़ने वाले रेखांकनो से ही ज्ञात हो सकेगा.

एक साधारण सा अजनबी 'राही' किसी तरूणी के रूप लावण्य पर मोहित होकर अनजाने में ही उसे मधुबाला क्यों कह बैठा और किस संयोगवश 'राही' की उत्सुकता वास्तव में 'मधुशाला की मधुबाला' ही निकली. मधुबाला द्वारा 'राही' को अपने आगोस में समेट लेने के लिए जो प्रयास किया गया, उसकी ही कहॉनी 'मधुशाला की मधुबाला' की परिणित हैं.

राही अपने प्रथम उद्बोधन में कहता है-
हे मधुबाले कहां चली तुम,
आंचल से ढक कर हाला
घुँघट के पट खोल सुनयने,
चन्द्रमुखी भर दे प्याला।।

राही जब न चाहते हुए भी मधुबाला के चंगुल में फंसकर अपना सर्वस्व नाश कर बैठता हैं. तब उसे लगता है कि मधुबाला नर्क की खान हैं और मधुघट मौत का कुँआ. उसके हाला और प्याला महाकल के दूत सदृश लगने लगता हैं. राही अपनी तड़पन को इस प्रकार व्यक्त करता है-

जितने अब तक बने शराबी,
निश दिन पी कर रस हाला।
नाम मात्र कुछ शेष नहीं हैं,
लुट लिया सब कुछ प्याला।।
राजा रंक फकीर हुए है,
गढ़ किलो की गिरी दिवारें।
सुख वैभव सब लुट लिया है,
मधुशाला की मधुबाला।।

राही के बदले हुए रूख को देखते हुए मधुबाला कहती है-

जीभ पकड़ कर अभी खींच लू,
अगर कहा फिर निकृष्ट हाला।
जाकर अपने घर घर देखों,
मेरे जैसा मधु प्याला।।

उमर खैयाम, मिर्जा गालिब, कालजयी कृति 'मधुशाला' के डॉ० हरिवंश राय 'बच्चन' के भावनाओं से इतर राही अपनी भावनाओं को किस दृढ़ निश्चय के साथ व्यक्त करता है-

आओ हम सब करें प्रतिज्ञा,
नही पिंयेगे अब हाला।
एक नहीं सौ बार शपथ लें,
नही छुयेगें फिर प्याला।।

इस प्रकार राही और मधुबाला के बीच बात बनती और बिगड़ती रहती हैं. अंत में राही ने गॉधी जी के मद्यनिषेध के सपने को साकार करते हुए मधुशाला को विनाश का कारण मानते हुए उसके खात्मा करके ही संतोश करता है-

जन मानस जय बोल उठा,
कह कर नहीं पियेगें हाला।
बोल उठा घरती का कण-कण,
नहीं छुएगा कोई प्याला।।
अपना कुल परिवार जलाकर,
मधुशाला जलते बोल उठी।
उठा जनाजा देख लो अपना,
मधुशाला की मधुबाला।।

राही ने सारे संसार को यह कहकर आगाह कर दिया कि अब समय और धन दौलत को नशाखोरी में बर्बाद करना अपने पैर में कुल्हाड़ी मारना होगा. वह कहता है-

देश को विकसित करना सीखों,
त्याग दिये जब रस हाला।
कर्णधार हो देश के अपने,
निर्मूल धरा से हो प्याला।।

समीक्षक: पं० ओम प्रकाश 'विकल'
कवयित्रीः डॉ०(श्रीमती)तारा सिंह
समीक्ष्य कृतिः अब तो ठंढी हो चली जीवन की राख

समीक्षा के लिए कम से कम दो प्रतियां भेजें. अगर आप समीक्षा लिखवाकर भेजते हैं तो और ही अच्छा होगा. लेकिन साथ में एक प्रति किताब की अवश्य भेजें

विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित पुस्तक

1. मधुशाला की मधुबाला	:	लेखक : राजेश कुमार सिंह	मूल्य 10.00
2. अपराध	:	लेखक : राजेश कुमार सिंह	मूल्य : 10.00
3. सुप्रभात	:	दस रचनाकारों का संग्रह	मूल्य: 10.00
4. निषाद उन्नत संदेश	:	लेखकःचौ0 परशुराम निषाद	मूल्य: 10.00

पुस्तकों के लिए भेजें/लिखें: मनीआर्डर/डी.डी.
सचिव, विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान, एल.आई.जी-93, नीम सरॉय कॉलोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद